मैं ही इसने दिया बाण परन्तु नहीं चुका सकते ताकि बालि अपनी इच्छा पूरी कर सके; दूसरे बालि के हृदय में अभिमान है। अतः प्रभु अपने जन के गर्वहारी हैं। अतः बाण मारकर उसका गर्व नाश करते हैं यह प्रभु की भक्तवत्सलता।

मारा बालि राम तब हृदय माझ सर तान॥ (४-८)
परा बिकल महि सर के लागें। पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगें॥
पुनि पुनि चितइ चरन चित दीन्हा। सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा॥ (४-९)

बाण लगने से विकल होकर पड़ गये परन्तु बैठा है। उठ बैठा है क्योंकि बाण बाहर निकले बिना प्राण नहीं जाते हैं। सन्मुख प्रभु को पा प्रभु चरण में अपना चित्त को स्थिर करता है एवं अपने प्रभु को पहचान कर सफल मनोरथ होता है - यह है उसकी गुप्त प्रेम भक्ति। उसके हृदय में तो प्रभु प्रेम लबालब भरा हुआ है इसीलिए अभी तो नेत्रों ने तो प्रभु छवि दर्शन को सुख पा लिया किन्तु कान को भी तो कुछ समय प्रभु के मधुर शब्द के रस पान का मौका देना चाहिए। हृदय प्रेम तो निबाह चुके अब शब्द

(16/6)

इसप्रकार हेतु के दोष बचन में प्रश्न करता है कि हे प्रभो! अपराध और धर्म से युक्त [illegible] लिये हैं फिर यह [illegible] अपराध है क्योंकि [illegible] व्याध की तरह छिप क्यों मारा; समदर्शी हो सुग्रीव प्यारा और हैं मैं ही कैसे दुश्मन - मैंने बानर की भी धर्म में बाधा दी है। साधु पुरुष [illegible] सदा मौन [illegible] ; [illegible] कभी [illegible] नहीं, मैंने उनके शासन में कभी बाधा नहीं डाली और न कभी उनका अपमान ही किया, फिर मैं आपका शत्रु क्यों कर हुआ; [illegible] में वैर-प्रीति समयानुसार होती ही रहती है किन्तु अपने को वैर से अपराध को कारण [illegible] है। उसके इन प्रश्नों का उत्तर प्रभु विविध प्रकार से देते हैं जिनका प्रत्युत्तर बालि कई प्रकार से देकर बढ़ा सकता था किन्तु अपने प्रभु के अमृत मधुर वचनों को [illegible] अपने कानों को सफल करना ही स्वीकार [illegible] रूप या प्रभु की [illegible] की इच्छा की [illegible] उसके [illegible] हृदय का स्पर्श नहीं कर सकती, यह तो उनका एक साधु प्रेम का [illegible] ही था।

हृदयँ प्रीति मुख बचन कठोरा। बोला चितइ राम की ओरा॥
धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि ब्याध की नाईं॥
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा॥
(4-6)

छाती में गहरा घाव लगा था। प्राण शिथिल पड़ रहे थे। झगड़ने का अवसर नहीं था। प्रभु का कथन ठीक ही है अकुलाकर कह पड़ता है प्रभो! अब आपके दर्शन हो गया। तब अगुन मैं पापी कहाँ रह गया। मैंने पापों को जिसके दर्शन मात्र ने भस्म कर दिये। दूसरी बात यह है प्रभो आप गर्वहारी सिर्फ आप के दासों के ही हैं अन्यों के नहीं। जिस पर आपने छोट गर्व साथ किया उसके पहले ही है अवतार जो भी आपने मुझसे अपनाकर दास के रूप दे दिया। अब तो है आप का एक ही दास है और आप मेरे आराध्य स्वामी हैं। अतः समय में आपने दर्शन देके ही मुझे दिव्य गति दे दी। अब मुझको कुटुम्ब पापी क्यों कहते हैं। मुझे स्वामी के समान सेवक की चतुरता नहीं चल सकती मैं तो आप की शरण पड़ा हूँ। अब निरन्तर मुझ

(1612)

को उपल लिया जाय पुनि

"सुनहु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि॥" (४-९)

शरणागत बालि के ऐसे कोमल वचन सुन कर शरणागत वत्सल करुणा वरुणालय में करुणा उमड़ पड़ती है और प्रभु के शीतल सुन्दर कर बालि के शीश का स्पर्श करते हैं। प्रेम वश हो कांपते हुए मस्तक पर हाथ रख दिया। मर्यादा चली गई। वह शरणागत की भक्ति के वश प्रभु भूल जाते हैं और ऐश्वर्य प्रकट हो जाता है प्रभु जब से कह उठते हैं तुम्हारे शरीर को मैं स्थायी किये देता हूँ काल की सीमा के पार तक। तुम अपने प्राणों को रोक लो— तुम इच्छा मृत्यु हो गये। जब जन भावना में अपने प्राणों को प्रभु के चरणों में रख कर देता है तब उसके प्राणों को शरीर में रोकने की क्षमता सरकार में भी रह जाती। प्रभु तो प्रेमी भक्त की इच्छा के वश हो जाते हैं। अतः भक्त को ही कहते हैं प्राण रोक लो। यही कथन

जटायु को भी कह आये हैं किन्तु इस भक्त के लिये यह पार्थिव शरीर कुछ भी महत्व नहीं रखता—

"सुनत राम अति कोमल बानी।
बालि सीस परसेउ निज पानी॥
अचल करौं तनु राखहु प्राना।" (४-१०)

कहता है भक्त बालि कि हे प्रभो इस जन का शारीरिक बल का गर्व और अपार गर्वहरी ने आप की अपनी कारण भेद कर नाश कर ही दिया है इस शरीर पर मेरी आसक्ति भी नहीं रही। प्रभो जन्म भर तो मैं यही इच्छा करता रहा कि युद्ध में मुझे वीरगति प्राप्त हो और अंत समय प्रभु मेरे सम्मुख उपस्थित रहें सो तो प्रभु आपने कृपा करके मेरी दोनों इच्छाओं को पूर्ण करने को भक्तवत्सल जनरंजन प्रभु सम्मुख आ गये हैं फिर मुझे लालच दे रहे हैं — ऐसा तो मैं मूर्ख नहीं बहाने का कि रूप स्वरूप आपका सुख को हाथ से खो दूँ। प्रभो, योगीजन तो अपना जीवन योग कर लें पर अंत समय राम नाम नहीं निकल पाता। अपने प्रारब्ध कर्म

बाधा डाल देते, अतः प्रयत्न किया तो आत्मा
शरीर से नहीं मुक्त हो नहीं निकलता। लगातार
अंदर भी कोशिश है प्राणों को लेकर रात यह
लाकर मैं प्राण में बन्द कर सामने रहे श्री राम
की मूर्ति पर ध्यान लगा स्तुति का वर्णन नहीं करते,
जानते भी हैं सिर्फ काशी में प्रयत्न नहीं।
मुझे यह ख्याल तो काफी भी नहीं है। यह
तो इस दीन जन पर आपकी अहैतुकी कृपा
ही है कि आप पर पूर्ण स्थिर ध्यान कर
मृत्यु मुख में पड़े जन को सम्हाल रहे हैं।
यह संयोग बार बार नहीं बनते अतः प्रभु
क्षमा करें मुझे यह शरीर अब नहीं रखना है
"जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं॥
जासु नाम बल संकर कासी। देत सबहि सम गति अविनासी॥
मम लोचन गोचर सोइ आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा।
अर्थात मुनियों को अंत में राम की प्राप्ति नहीं होती
और काशीवासियों को सिर्फ की प्राप्ति होती है मुझे
तो आज दोनों की प्राप्ति हुई है। यह संयोग कभी बनने
का ही नहीं है कि श्रुतियों द्वारा नेति नेति कहे जाने
वाले के स्वरूप के दर्शन हो जायें। मैं हस्तप्रायन्न
होउ. कर शरीर को छोड़ने लगा

करुणा

विनम्र निवेदन है कि आपने अपनी दया
से लिखा है कि आपके दर्शन लालायित हैं मैं
अब प्रेमपूर्वक कह रहा हूँ कि आप सेवा एवं पूजन
अपराधों को लिखने क्षमा कीजिये। इस लायक
आचरण करने हेतु नहीं। अब क्रोध का [illegible]
को प्राप्त हो प्रभु और मुझ पर कृपा वर्षा करके
कर दीजिये कि जन्म जन्मान्तर में मेरी
रति प्रभु जी की चरणों में ही बनी रहे - पल
कर्मफल से कब को न सी शान्ति प्राप्त हो - हर
शरीर में मैं आपका ही दास बना रहूँ। धन्य
हैं कविवर श्री गुरु महर्षि वाल्मीकि जी ने
प्रभु से किष्किन्धा काण्ड दोहा १४९ में मांगा एवं भरत
लाल ने अयो. काण्ड दोहा २०४ में त्रिवेणी से मांगा
वही वर आज वाल्मिक ने स्वयं प्रभु श्री राम से
मांगा लिया "जो हैं जोनि जन्मों कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊ"
(उ-१०)
। तब से यह मांग उपस्थित [illegible] होच्चलना है
मेरे प्रभु की कुछ भी सेवा नहीं बन पड़ी तो जब मेरे
कुल तिलक ~~[illegible]~~ अनुराग के आश्रय से ही
सीता [illegible] प्रसन्न है और दास [illegible] नहीं
जाय; वैसे तो जन्म सार्थक होगया। एवं अनुराग

कोई

को प्रभु का सेवक बना दूं; ताकि इसे भी प्रभु प्राप्ति हो जाय; सुग्रीव भी प्रभु का दास है। और यह भी प्रभु का दास है अब आप से अनुरोध है प्रभु अंगद को युवराज बना दें। इस तरह सुग्रीव के बदले में इहलौकिक फल मिली है और प्रभु पदों को प्राप्त हो जायगी। बालि ने लाज प्रभु सदा शरण से आते हैं। प्रभु अपने लिये जन्म जन्मान्तर प्रभु पद प्रीति प्राप्त कर तुरन्त उसी समय से विनय करता है कि प्रभु मेरे इस तनय अंगद की बाँह पकड़ कर इसे अपना दास स्वीकार करें - यह है मरने के समय अंगद के लिये प्रभु के समक्ष बालि की वसीयत। जिसे अंगद को युवराज पद दिलवा कर प्रभु ने स्वीकारा

यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिए।
गहि बाँह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिए॥ (४-१०)
लछिमन तुरत बोलाए पुरजन बिप्र समाज।
राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ अंगद कहँ जुबराज॥ (४-११)
राम बालि निज धाम पठावा। (४-११)

धन्य है बालि इहलोक और परलोक दोनों सँवारी

॥ श्री राम जय राम जय जय राम॥

25/5/83 सती सुलोचना

[तेलगु भाषा में तेरहवीं सदी में गोनबुद्ध द्वारा रचित रंगनाथ रामायण का बिहार राष्ट्रभाषा परिषद द्वारा प्रकाशित व श्री ए. सी. कामाक्षि राव के अनुवाद के आधार पर:]

भगवान आदिशेष की पुत्री एवं मेघनाद की पत्नि सुलोचना अति उच्च कोटि की पतिव्रता थी। विवाह के समय आदिशेष ने मेघनाद से कहा था कि जाने के पहले सभी कार्यों की सूचना अपनी स्त्री को देकर जाना एवं अपनी पुत्री को एक हार देते हुए कहा था कि तुम विदा करते समय इस हीरा से आरती उतार कर भेजना। इस प्रकार करने से उस भूतल में वह किसी के द्वारा जीता नहीं जा सकेगा। (6-199)

संभवतः विभीषण को इस रहस्य का पता है एवं वह भी जानते हैं कि अब तक अनुष्ठान किया हो। क

सुलोचना से विदा लिये बिना ही मेघनाद ने इन्द्र विजयी होने के लिये प्रस्थान किया है। ✻ मुनि यह निश्चित किया है कि अब यदि विध्वंस कर देते हैं न तो उनसे मृत्यु की ही प्राप्ति प्राप्त हो सकेगी और न सुलोचना के पास जा मिलने पायेगा, क्योंकि वहाँ ही मोक्ष मिल जायगी। ~~अतः~~ इसी अवस्था में इसको मरवा देना ठीक है अतः श्रीराम ने सारा भेद बता कर लक्ष्मण को युद्ध के लिये भेजा था।

यह एक अटल नियम है कि जीव की जिस समय जहाँ पर और जिस प्रकार मृत्यु होनी है उसी प्रकार होकर ही रहेगी [✻ अध्यात्म रामायण युद्ध काण्ड सर्ग ५ श्लोक ५८] मृत्यु इस नियम में परिवर्तन कहाँ ~~अबूझ~~ और कब आने देती है? अतः विध्वंस कर लक्ष्मण ने उसे मार डाला।

✻ विभीषण राम को मालूम था कि लक्ष्मण ने कर देने से [illegible] में मेघनाद से कहा है कि यज्ञ पूरा होने से तुम अजेय हो जाओगे किन्तु यदि यज्ञ में विघ्न हो और यज्ञ अपूर्ण रहे तो युद्ध में मारे जाओगे (६-१०३) (वा० रा० ६-८४-१४) ([illegible] ६-८५-१४-१५) [illegible]

यह भी मालूम था कि जिसने १४ साल बिना नींद और आहार का त्याग किया है उसी के हाथ मेघनाद की मृत्यु निश्चित की है एवं लक्ष्मण अनिद्र रहे, और अयोध्या से निकलने के बाद चौदह साल तक निद्रा और आहार का त्याग लक्ष्मण ने किया है (आध्यात्म रामायण ६-८-९८ से ९९ तक)

(61)

मानस के अनुसार मेघनाद के शव को पवनसुत उठा कर लंका द्वार पर डाल गये (६-७७) किन्तु रंगनाथ रामायण के अनुसार शव राम दल में पड़ा था। जब सुलोचना ने अपने पति के साथ जल मरने का अपना निश्चय रावण को सुनाते हुए शव को मँगवा देने का अनुरोध किया तब रावण ने रामदल से शव मँगवाने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहा कि तुम्हारी इच्छा हो ऐसा करो। अतः रामदल में जाकर शव लाने की ~~अनु~~ अनुमति दे दी (६-७९२)

रामदल में पहुँच कर श्रीराम को प्रणाम करते हुए अपना परिचय देकर अपने पति को प्राण-दान देने की प्रार्थना की। तब हनुमान ने उन सर्वज्ञ प्रभु को सुलोचना की विचार की परीक्षा करने का अनुरोध किया। इस पर विचार कर राघव ने सुलोचना से कहा 'आग में जल कर अपने पति के साथ पृथ्वी पर जलकर लौकिक-अलौकिक सम्पत्ति

के साथ चिर काल तक सुख भोग करके
अन्त में वैकुण्ठ में अपना इच्छित सुख
प्राप्त करोगे। (६-११२)।
हर्षित हो विनयपूर्वक उसने जानकी रम
णसे अपने पति का सिर मांगा । ऐसी पुत्रिका
को तब सुग्रीव ने कहा यदि तुम पतिव्रता हो
तो अपने पति के पास जाकर बातचीत करो।
तदनुसार वह युद्ध-क्षेत्र में पहुंचकर विलाप
करते हुए मेघनाद की शव के पास जा कर कहा।
यदि मैंने आप को ही देव मान कर पातिव्रत्य
धर्म का पालन किया हो तो आप मुझ से
संभाषण करें। (६-११२)
इस पर मेघनाद की शव ने आंख खोल
कर कहा - मेरा वध करने वाला तुम्हारा पिता
ही शेष है। मुझे जीतने की शक्ति अन्य किसी में
भी नहीं।......। संभाषण के बाद उसने आंखें
बंद कर ली। धन्य है सती सुलोचना की
पातिव्रत्य-शक्ति और महत्ता। (६-११२)
फिर जाकर उसने श्री राम से शव को
प्राप्त किया और लंका जा कर शव के साथ चिता पर जल कर
सती हो गई

एक भजन-गायक ने किसी पुस्तक से
पढ़ कर गा गा कर यह पद्य सुनाया था: —

रामायण में सुलोचना गाई, अरज सुनो रघुराई।
आप शरणागतों के सहाई, अरज सुनो रघुराई।

मेरे ससुर ने झगड़ा मोल लिया,
यह चाहा न आपको कष्ट दिया,
वो तो हर लाये सीता माई ॥१॥ अरज सुनो रघुराई

दुखी जीवन का कोई सहारा नहीं,
और कैसे खिले नभ में तारा नहीं,
मेरे लिये रावन के भाई ॥२॥ अरज सुनो रघुराई

कटी भुजा लिखे, बात कैसे मानें,
बोली लेखा, हँसे सीस तब जानें,
कैसी अनहोनी बात बताई ॥३॥ अरज सुनो रघुराई

झूठ बोलूँ नहीं विश्वास किजीये,
शीश मेरे पति का मुझे दीजिये
देखो हँसकर यह सब की मिटाई ।।4।। गुरुजन सुनो रघुराई

राम बोले जरा धीरज धरना,
यह तो जिन्दों से बढ़कर है मरना,
पहले देखना है सिर हँसाई ।।5।। गुरुजन सुनो रघुराई

दई आज्ञा शीश अंगद लाया,
फिर सिन्धु ने थाली से लिपटाया,
हँसा सिर जो सेना ने दिखलाई ।।6।। गुरुजन सुनो रघुराई

शीश लेकर सुलोचना सती आ चली,
सती होकर स्वर्ग में जाकर मिली,
संत मंडल ने हरि गुण गाया,
धर्म शक्ति का इसमें सब आधार
चलो सदा धर्म पर भाई ।।7।। गुरुजन सुनो रघुराई

मानस संगम Nov. 1984 पृ 223 में प्रकाशित

कृ.ले.सं. 56 (1623)

2/3/83 रावण – ध्यानी राम भक्त

(अध्यात्म रामायण के अनुसार)

श्री राम चरित मानस का रावण पहले तो सोचता है श्री राम भगवान के ही अवतार हैं किन्तु दूसरे ही क्षण माया विमोहित हो परीक्षा लेना चाहता है। शायद कहीं प्राकृत मनुष्य ही हों तो सीता को हर लाऊँगा और फिर सीता हरण के समय मानसिक प्रणाम कर कर सीता को हरता है यानि दुविधा-ग्रस्त प्रतीत होता है।

~~किन्तु~~ अध्यात्म रामायण के रावण को श्री राम के ~~ब्रह्म~~ पर ब्रह्म अवतार का पूर्ण ज्ञान है और दृढ़ विश्वास है।

रावण के बड़े बड़े वीर सब मारे गये अकेला रावण ही बचा हुआ है। स्वयं रावण भी श्रीराम के बाणों से व्याकुल हो

(1625)

लंका लौट कर गुरु शुक्राचार्य के पास जाकर अपनी विजय का उपाय पूछता है। उनकी सलाह से अपने महल में एक पाताल के समान गुहा तैयार कराई। अपने लंका के सारे दुर्गों के फाटक बंद करा कर होम ही होम करने लगा। (८-१०-१२)

धुआँ देखकर विभीषण ने सारा भेद श्रीराम को बताते हुए यज्ञ विध्वंस करने के लिये अंगद, और हनुमान को (दस करोड़) वीरों के साथ भेजवाया। उन लोगों ने लंका के द्वारपालों को मार कर लंका में प्रवेश किया। (८-१०-१७)

विभीषण की अर्धांगी सरमा ने हाथ के संकेत से होमस्थान बता दिया। (८-१०-१८)

गुहा में प्रवेश कर हनुमान ने उसके हाथों से सुवा छीनकर उसी से उस पर प्रहार किया - अन्य वानरों ने भी उस पर प्रहार किये किन्तु उसने ध्यान नहीं छोड़ा। (८-१०-२३)

अंगद मन्दोदरी को चोटी पकड़कर ले आये और रावण के सामने उसकी चोली फाड़ डाली उसके आभुषण जहां तहां गिर गये। अक्षयकुमार मारकर अक्षय रावन-पत्नियों को पकड़ लाये। उन स्त्रियों ने रुदन का चीत्कार शुरू किया। किन्तु अपना जीवन बचाने के लिये अपनी स्त्री और लक्ष्मी से मुँह मोड़ लिया है (६-९०-३२) उनके नाद और विलापों को सुनकर रावन उठ खड़ा हुआ और नल वानरों ने यज्ञ विध्वंस कर डाला (६-९०-३४)।।

मंदोदरी को सांत्वना देकर जब युद्ध के लिये जाने को उद्यत हुए तब मंदोदरी ने युद्ध से विरत करने के लिये समझाते हुए कहा:-

मन्दोदरी — जिस प्रभु ने मत्स्य, कच्छप, वाराह नरसिंह, वामन, एवं परशुराम आदि अवतार लेकर पृथ्वी का दुःख नाश किया था वही प्रभु रघुवंश में राम रूप से अवतीर्ण हो आपके लिये मनुष्य रूप हुए हैं।

1626

अथवा अपने और अपने कुल के नाश के लिये ही आप सीता को हर लाये हैं। श्रीराम किसी से भी जीते नहीं जा सकते। अतः सीता को श्रीराम के पास भेज कर, विभीषण को राज्य देकर हम दोनों वन को चले चलें। (६-१०-४४ से ५४ तक)।।

इस पर रावण ने मन में विचार किया कि इस बार युद्ध में अवश्य मारा जाऊँगा अतः श्रीराम के प्रति मेरी आसक्ति भावना एवं मेरे द्वारा उठाये गये विभिन्न कदमों के कारणों का स्पष्टीकरण कर दूँ ताकि मेरी अर्धांगिनी मन्दोदरी की सारी शंकाएँ दूर होकर वह शान्ति प्राप्त करे।

रावण— मैं राम को साक्षात् विष्णु और जानकी को साक्षात् भगवती लक्ष्मी जानता हूँ—

जानामि राघवं विष्णुं
लक्ष्मीं जानामि जानकीम्।।
(६-१०-५६)

मन्दोदरी – फिर आप धनुष से डरते क्यों पर इसे क्यों गये? युद्ध करके नहीं जानकी को जीत क्यों नहीं लाये?
मैंने जिस धनुष जानकी छिपायी। सब में क्या जिसको है किन्हें छुई।
(रा. ना. २३४)

रावण – यही तो और भारी बात है। श्री राम परब्रह्म का अवतार हैं और जानकी उनकी आद्याशक्ति नारायणी हैं यह मैं भली भाँति जानता हूँ। सीता को पत्नि रूप में प्राप्त करने की तो मैं स्वप्न में भी कहीं सोच सकता हूँ? इसी लिये मैं ने शिवधनु को उठाने का यत्न नहीं। इस युगल मूर्ति के एक साथ दर्शन करने को इससे बढ़कर सुअवसर प्राप्त हो सकने की संभावना मुझे इस जीवन में न होती। आराध्य परमात्मा की इसी तृप्ति के उद्देश्य ही जाना था। दर्शन कर जीवन सार्थक हो गया।
([illegible])
(रा. ना. ९-२५६)

(1624)

मन्दोदरी — श्री राम के बल को क्या आप नहीं जानते ?

रावण — भली प्रकार जानता हूं — वे अतुल बल हैं श्रीराम का। उन्होंने तो बाल्यावस्था में ही मारीच को एक फल हीन बाण से सौ योजन फेंक दिया (३-१७), खर दूषण त्रिशिरा आदि ही समान बलशाली थे उनको भी अकेले ही राम ने मार डाला, जिस बालि की कांख में मैं छह मास दबा पड़ा रहा उसको भी राम ने एक ही बाण से मार डाला था। यही नहीं मैं श्रीराम को सर्वथा अजेय ही मानता हूं।

मन्दोदरी — तो फिर इतनी बार समझाने पर भी, इस सारे कुल का नाश कराकर भी, आप इस युद्ध से विमुख क्यों नहीं हो रहे हैं ?

रावण - अकेले सुनते ही 4 बार अवतार नहीं समझ आया. इनमें [illegible] मारीच, जटायु, पवन सुत, अंगद, शुक, सारण, लखनलाल (फूल), [illegible], कालनेमि. कुम्भकर्ण. प्रत्येक ने एक-एक बार, 3 बार विभीषण ने तीन बार [illegible] माल्यवन्त ने [illegible] बार इसप्रकार कुल मिलाकर 12 बार प्रभु ने समझाया था जो चुका। प्रत्येक बार भी राम के परमेश्वर अवतार होने की मेरी भावना की पुष्टि ही होती रही।

मन्दोदरी - यह अवतार आपने गुप्त ही क्यों रखा?

रावण - इसलिये कि प्रकट करने से मेरी अभीष्ट सिद्धि में बाधा पड़ जाती।

1630

मन्दोदरी — किसी भक्त को पद प्रहार कर निकाल कहाँ छिपा तब वह शत्रु दल में जा मिला आपने कैसे परा[illegible] को [illegible] यह कैसी राजनीति हुई?

रावन — अपनी अनुनीति सिद्धि में उसको सहायक बनाना और था।

मन्दोदरी — क्या? अनीति सिद्धि है न तात को नहीं

रावन — शायद यह प्रीति न मिलने से. युद्ध भूमि से जीवित लौटे का प्रति उत्तर: प्रथम गुप्त भेद सबसे पहली बार आज तुमसे प्रकट कर रहा हूँ ताकि तुम्हारी छटपटी मिट जाय।

जब सुपनखा ने भी इस सीता का परिचय देते हुए खर दूषण त्रिशिर वध का समाचार सुनाया कि यदि राम के हाथ हैं? प्राण जाय तो निस्सन्देह प्राणों निर्दोष हैं ही त्रिलोकी को [illegible] कर सकते हैं

रा. मा. 3-23 (क)

आदि रावण ... कुर्यां न तैं लेके निजाम स्वरूप
अपनी कर्मों से ... ईस नासिका पुनि
तब मैंने सोचा सूपनखा के हाल ... से मुझे सूचित है कि मैं भयंकरी मैं ... हूँ और यह श्वास विहीन पृथ्वी करूँगा।

ताके कर रघुपति के हैं, पुन नैन चले ... ॥
निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह॥ (रा. मा. 3-9)

फिर निश्चय किया निश्चय ही प्रभु मेरे उद्धार के लिये ही दण्डक वन में पधारे, मेरी मृत्यु मनुष्य के ही हाथ एवं प्रभु सत्य संकल्प हैं मुझे मारेंगे एवं हम
नर कें कर आपन बध बाँची॥ (रा. मा. 6-25)
राम सत्य संकल्प प्रभु सभा कालबस तोरि (रा. मा. 5-41)
तब फिर विचार किया प्रभु के हाथ मर कर मेरा तो उद्धार हो ही जायगा। किंतु मेरे भाइयों, एक लाख बेटे, सवा लाख पोतों, एवं मेरी रानियों का उद्धार कैसे होगा। अतः यही है प्रभु श्रेष्ठ कि मैं इन सबका उद्धार करा दूँ।

(1632)

उस सारी रात सोच विचार करके इस प्रतीक्षा सिद्धि के लिये योजना बनाई। मैंने इसके अनुसार ही किया श्री राम और सीता अभिन्न हैं। यदि किसी तरह सीता को ले जाया जाय तो श्री राम को लंका आना ही पड़ेगा। इस तरह इन दोनों के चरण स्पर्श से लंका की भूमि पवित्र हो जायगी।

प्रभु ने राक्षसियों को सीता की चौकसी के बहाने सीता के पास रख दिया तो एक साल तक सीता के द्वारा राम राम का उच्चारण सुनकर राक्षसियों का उद्धार हो जायगा। हुआ भी यही एक बार मैंने त्रिजटा से पूछा। पूरी चौकसी रखती हो तो उन्होंने कहा। राम राम के उच्चारण सुन कर राम मय बुद्धि हो जाती। *

रामेश्वर स्थापना में श्री राम ने मुझे आचार्य बनाया था। उस समय उनसे संकल्प कराया था "रावण सहित राक्षसों के उद्धार हेतु रामेश्वर स्थापना" राम संकल्प प्रभु ने कुल का उद्धार कर ही दिया *

(1632 रि

~~[illegible]~~ उपदेशात्मक रामायण

सुन्दरकाण्ड सर्ग १२ में श्लोक १५ से १९ तक
रावण की मानसिक स्थिति का वर्णन है।
रावण को सदा यही चिंता रहती थी कि किस
प्रकार श्री राम के हाथ से जल्दी से जल्दी मेरा मरण
होना है। मैं कैसा बना रहा हूँ कि वे प्रभु भी तक
सीता के लिए जीते नहीं आयेंगे। इस प्रकार
हृदय में चिंतित रावण का स्मरण करने से
स्वप्न में देखा कि राम का संदेश लेकर आया
हुआ वानर वृक्ष की शाखा पर बैठा हुआ सब
देख रहा है। स्वप्न को सच्चा मानकर उसने
निश्चय किया कि जानकी को प्रपंच वाग्जालों
से त्रस्त तुरन्त करूँ ताकि वह वानर जाकर
श्री राम को कह सके।

रावणो राक्षसेशाशु महत्यां किं करिष्यति
सीतार्थे मपि नाथोऽतु राघवः किं करिष्यति (१-२ ...)
इत्येवं चिन्तयन्नुच्चै राक्षसेन्द्रः सदा हृदि। (१६)
स्वप्ने रामेण सन्दिष्टं कश्चिदागत्य वानरः।
कमशक्तप्रधर्षं सूक्ष्मो वृक्षाग्रस्थोऽनुपश्यति॥ १८
जानकीं वाक्यं चैव विद्धार्ता दुःखितां किं राम हृदयम्।
करोमि दूत इह रामाय निवेदयतु वानरः॥ १९
P.T.O

अध्यात्म रामायण के उत्तर कांड में अगस्त्य जी
श्री राम से कहते हैं कि ईश्वर के हाथ से मरने की
इच्छा से रावण ने जानकी जी को चुराया। यथा

हृतवान् जानकीं देवीं [illegible] (७-३-५१)

"मैं विष्णु भगवान के हाथ से मर कर निःसंदेह वैकुंठ
को जाऊंगा। अतः मुझे ऐसा कार्य करना चाहिये
जिससे विष्णु भगवान मुझ पर कुपित हों। ऐसा सोच कर
ही जानकी को हर लिया था।

विष्णुना निहतो यास्ये वैकुंठं निश्चितम् (७-४-५)
अचिराद्विष्णुर्येन [illegible] कार्यं करोम्यहम् ॥
इति निश्चित्य वैदेहीं जहार [illegible] ॥
(७-४-५०)

द्रौपदी – आपने मेरे पतियों को नाश करने का निश्चय किया ही क्यों?

उत्तर – प्रत्येक जीव को मरना तो होता ही फिर क्षत्रिय की तो रण में लड़कर ही मरने में शोभा है। फिर प्रभु श्रीराम से लड़कर मरने का सौभाग्य कब मिलेगा सब कुछ सिद्ध हो जायेगी। हनुमान जी यही – इसलिये मैंने श्रीराम से युद्ध ठाना –

रामसरिस को दीन हितकारी।
कीन्हे मुकुत निसाचर झारी॥ (दो.-नं.७४)

द्रौपदी – आपने मुझे और भीमसेन को इस उद्धार करने की योजना से बाहर क्यों रख रखा।

– तुम दोनों तो प्रथम से परम अनन्य भक्त हो। तुम लोगों का उद्धार तो होना ही है मेरी योजना में शामिल करने की आवश्यकता ही न थी।

(1634)

मन्दोदरी — विभीषन के राम दल में रहने से पति की मृत्यु किस प्रकार होगी?

उत्तर — (1) वे ही भेदियों का परिचय राम को करा कर उनका संहार करवाता रहेगा।

"कहउँ बिभीषनु तिन्ह के नामा।
देहिं राम तिन्हहू निज धामा॥" (लं०का० ६-४५)

(2) मेरे पुत्र मेघनाद की मृत्यु का भेद सिर्फ विभीषण को ही मालूम है। श्रीराम सर्वज्ञ हैं पर इस समय ब्रह्मा के वरदान की पूर्ति के लिये नरलीला का अभिनय ही करते रहेंगे। अतः उनके द्वारा इन दोनों की मृत्यु का रहस्य मालूम होने पर ही इन दोनों की मृत्यु होगी।

"जौं प्रभु सिद्ध होइ सो पाइहि।
नाथ बेगि पुनि जीति न आइहि॥" (लं०का० ६-७५)

"नाभिकुंड पियूष बस याकें।
नाथ जिअत रावनु बल ताकें॥" (लंका० ६-१०२)

(3) राम के पास रहकर उसको सब भेद बताता मिल

(४) रावण के हर जाने पर विभीषण को राज्य

मिलने से मेरे पिता के वंश में ही लंका दहन आ गया। ये ही मेरी राज-नीति विभीषण को लात मारने में नीति

अस कहि राम तिलक तेहि सारा।
सब सिधि जाइ बिभीषन साथा।
सारेहु तिलक कहेउ रघुनाथा॥ (रा॰ मा॰ ६-१०६)

मन्दोदरी- जब जानकी को जगदम्बा मानते हैं तो उनका हरण किस तरीके से किया।

रावण - मातृ बुद्धि से ही तब से उन्हें मानसिक प्रणाम किया। जानकी के पैरों के नीचे की पृथ्वी को नखों से खोद कर उन्हें अपनी हथेली पर उठा लिया और रथ में डाल कर तुरन्त आकाश मार्ग से चल दिया एवं लंका में भी उन्हें अपने अन्तःपुर में टिकने न दिया अशोक बन में रक्खा और यक्षणियों से घेरे रखकर मातृ बुद्धि से उनकी रक्षा करने लगा। (३-८-६४)

(1636)

"मन महुँ चरन बंदि सुख माना" (रा.च.मा. २-२८)

"ततो विदार्य धरणीं नखैरुद्धृत्य बाहुभिः।
तोलयित्वा रथे क्षिप्त्वा ययौ क्षिप्रं विहायसा॥ (३-७-५९)
देवान्तः पुरे रहस्ये लोकशोकविनिर्मुक्ते क्षिप्त्वा स
राक्षसीभिः परिवृतां मातृबुद्ध्यान्वपालयत्॥" (३-७-६५)

अरुन्धती — प्रभु मैं किस दिन किस को मैं जान
यह किस योजना के अनुसार पर था

राजन — इसमें मेरा कोई हाथ या सिद्धान्त
काम नहीं कर रहा था। प्रभु श्री राम
ही सब के हृदय के प्रेरक हैं।
"उर प्रेरक रघुबंस बिभूषन" (रा.च.मा. ७-११३)
सब को ही प्रेरणा उनकी हुई
उसी प्रकार स्वतः ही हो गया/चला
गया। श्री राम के वन गमन के पहले
दिन वृद्धा के द्वारा मैं जो गये नारद
अप्रतीक्षा में एकान्त में राम से
जब पूजनी का भार उसने संभाली
उनकी प्रतिज्ञा का स्मरण करते हुए
कहना कि ... कि

काल आपका राज्य तिलक होने वाला है आपकी प्रतिज्ञा पूरी कैसे होगी तब श्री राम ने उत्तर देते हुए कहा "काल क्रम से जिन जिन का प्रारब्ध क्षीण होता जायगा उन उन दैत्यों को ही मार कर मैं क्रमशः पृथ्वी का भार उतारूंगा। मैं कल ढूंढकर राम आदि में

"किन्तु कालानुरूपेण तत्तत्प्रारब्ध संक्षयात्।
हरिष्ये सर्वभूभारं क्रमेणासुरमण्डलम्। (२-३-३७)

इसका प्रमाण तुम्हारे सामने ही है मेघनाद और लक्ष्मण के युद्ध कई बार हुए किन्तु जब उसकी मृत्यु का समय आया तभी वह उसी लक्ष्मण के हाथों मारा गया। और राम का युद्ध भी कई बार हुआ पर रावण जीवित नहीं लौट गया। जिसकी जिसके द्वारा जिस जगह जिस प्रकार जिस समय मृत्यु का विधान लिखा गया है उसी उसी प्रकार मारा जाता है यदि इस सृष्टि का सनातन सत्य नियम टल नहीं सकता।

(1638)

कहता चला जाता है पक्षसराज-
रान की इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं
होता। इसकी एक अद्भुत अनुभव
बताऊँ। मेरा विचार था कि स्वर्ग
तक सीढ़ी बनाऊँ ताकि सभी
उस सीढ़ी पर चढ़ कर स्वर्ग
चले जायँ नरक में जाना ही नहीं
पड़े। शुभ काम में विलम्ब न करना एवं
अशुभ में शीघ्रता न कर विलम्ब
पर विलम्ब करना चाहिये। इस
सिद्धान्त के विरुद्ध मैंने आचरण
किया। सीढ़ी पीछे लगवा सोचता ही
टालता ही रह गया। आज मैं
संसार से विदा होने वाला हूँ सीढ़ी
तो बन न पायी कारण ईश्वर की
इच्छा नहीं थी। अब सोचता हूँ
कि उस सीढ़ी से स्वर्ग जाने के
लिये जाने वाले को तो सीढ़ी के
पास ~~क~~ चल आना ही पड़ता।
किन्तु अच्छी सीढ़ी स्वर्ग

जाने के लिये श्री रामनाम की प्रभु मे दृढ़ता ही रखनी है जिसके द्वारा अपने स्थान पर बैठा बैठा ही मनुष्य बिना श्रम और रूदन के अपने प्रारब्ध-जन्य फलों का भुगत करके श्री राम के चरणों तक पहुँच सकता है स्वर्ग प्राप्ति की जिसकी कामना करते हैं अतः अपने पुत्र एवं मेरी मृत्यु के लिये किसी प्रकार का शोक न कर इसे श्री राम की इच्छा ही समझ कर शान्ति पूर्वक भगवत भजन करती हुई अपना शेष जीवन बिताना।

इस प्रकार अपनी प्रेयसी की सारी शंकाएं मिटा एवं सब प्रकार उसे सान्त्वना दे शावक हर्षित हृदय से युद्ध के लिये प्रति शिविर प्रस्थान कर जाता है जिस प्रकार अति प्यासा जलाशय के पास जाय।

(1650)

श्री राम को यह विश्वास था कि मेरी ही जीत होगी। इधर रावण को यह निश्चय हो गया था कि मुझे अवश्य ही मरना होगा। अतः वे दोनों ही युद्ध में अपना सारा पराक्रम दिखाने लगे। ~~[illegible]~~

जेतव्यमिति काकुत्स्थो मर्तव्यमिति रावणः।
धृतौ स्ववीर्यसर्वस्वं युद्धेऽदर्शयतां तदा॥
(वाल्मी० ६-सर्ग १०७ श्लो० ७)

युद्ध न दिवस में बंद होता था न रात में (वाल्मी० ६-१०७-६६)। श्री राम उनके सिर काटते जाते पर कटे सिर की जगह दूसरे सिर तुरन्त निकल आते। तब विभीषण ने कहा इस के नाभि-देश में कुण्डलाकार से अमृत रखा हुआ है उसे आप आग्नेयास्त्र से सुखा डालिये तब ही इसकी मृत्यु हो जायगी।

"नाभिदेशेऽमृतं तस्य कुण्डलाकारसंस्थितम्॥

तच्छ्रोत्र आनतास्त्वेषां तस्य मृत्युस्ततो भवेत्॥
(अध्यात्म रा० ६-सर्ग ११ श्लो-५३,५४)
नाभिकुंड पियूष बस याकें। (रा०मा० ६-१०२)

इस पर श्रीराम ने आग्नेयास्त्र उसकी नाभि में मारा, और फिर उसके सिर और भुजायें मार डालीं। अब रावण के एक मस्तक शिर और दो भुजाएं रह गयीं किन्तु फिर भी वह भयानक युद्ध करता रहा।

एकेन मुख्यशिरसा बाहुभ्यां रावणो बभौ।
रावणस्तु पुनः क्रुद्धो नाना शस्त्रास्त्रवृष्टिभिः॥
(अध्या०रा० ६-११-५९)

अन्त में मातलि ने श्रीराम से निवेदन किया कि प्रभो आप इस पर ब्रह्मास्त्र छोड़ा छोड़ा जाय, इस के नाश का हेतु है। इसलिए समझिये प्राणनाथ, यदि शिर काटते हैं तो नहीं मर सकता नाभिस्थान (हृदय) विद्ध होने पर ही इसका अन्त है।

सकुशल है। इस पर श्री रा. ने
अमोघ बाण निकालकर जो ब्रह्मास्त्र
०अगस्त्य महर्षि ने श्री राम को दिया था।
उसके प्रयोग से रावण मर गया।
(अध्यात्म रा. यु. सर्ग ११ श्लो. ६१ से ६३)
(वा. रा. यु. कां. सर्ग १०८ श्लोक ३ से ४)
उसकी ज्योति प्रभु मुख में समा गयी
(रा. च. मा. ३-९३) (रा. च. ६-१०३)।

रावण के मरने पर आकाश स्थित देवताओं ने प्रभु श्री राम पर पुष्प वृष्टि की एवं आकाश स्थित सिद्धों एवं ऋषि मुनि स्थित चारणों ने श्री राम जय राम जय जय राम की तुमुल ध्वनि से वायुमंडल को गुंजायमान कर दिया।।

उपरोक्त के अनुसार रावण के समस्त कार्य पर पीड़क, समाज के लिये हानिकर एवं निंदनीय त्याज्य हैं।

(सं ले (क्र 57)) (1643)

मंत्र

1/4/83 महामंत्र —

राम राम

(2) बत्तीस अक्षर मंत्र

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे

(3) त्रयोदशाक्षर मंत्र

श्री राम जय राम जय जय राम

तेरह करोड़ जप से भगवान प्रकट होकर दर्शन देते हैं।

— समर्थ रामदास जी

(4) महान कामना, भक्ति मुक्ति की इच्छा

सो तुम जानहु अन्तरयामी।
पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी॥

यह सम्पुट लगाकर रामायण का नवाह पाठ।

(16५५)

(५) श्रीरामजी का साक्षात्कार प्राप्त

देखहिं हम सो रूप भरि लोचन।
कृपा करहु प्रनतारति मोचन॥

सम्पुट लगाकर रामायण का पाठ

(६) आराधना में उत्पन्न काम क्रोध को जीतना

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये।
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा॥
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे।
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च॥

(७) शत्रुओं से पीड़ित — नित्य दो सौ माला

राम राम रमानाथ रक्ष मां करुणानिधे
महादुःखार्त दीनोऽस्मि शरणागतवत्सल

(८) दारिद्र्य नाश

नन्दादि गोकुलत्राता दात्ता दारिद्र्य भंजनः।
सर्व मंगल दाता च सर्व काम प्रदायकः॥

गोपाल सहस्त्रनाम. के प्रत्येक
श्लोक के साथ पाठ करना।

(९) द्वादस अक्षर मंत्र

१०
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय
(२ग)

(९क) श्री सीतारामं वन्दे श्री राजारामं

(मानस पीयूष बाल. दो. १४३
पृष्ठ ६३।)

(९क) षडाक्षर मंत्र —
(१) ॐ नमः शिवाय
(२) श्री रामाय नमः
(३) श्री कृष्णाय नमः

(1646)

(१०) कार्य में उलझन - किंकर्तव्यमूढ होने पर

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः ।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ।

इस श्लोक का जप करके रात्रि में सो जाने से कृष्ण भगवान श्री उलझन सुलझा देते हैं। जब तक समाधान न मिले जप करते जाना।

(११) कन्याओं के शीघ्र विवाह

हे गौरि शंकरार्धाङ्गि यथा त्वं शंकरप्रिया ।
तथा मां कुरु कल्याणि कान्तकान्तां सुदुर्लभाम् ॥

प्रतिदिन के पार्वती जी के [illegible] चित्र पर चंदन पुष्प चढ़ा कर मंत्र की ११ माला या कम से कम ५ माला का जप।

(1647)

(१२) चतुर्दश हार मंत्र

जय राम जय राम जय जय राम

(१३)

श्रीकृष्ण दासोऽहम्

(१४) श्री कृष्ण शरणं मम
इससे प्रेम भक्ति बढ़ती है और सर्वत्र रक्षा होती है।

(१५) हनुमानजी
हं हनुमते नमः

(१६) श्री कृष्ण का साक्षात्कार
सर्वा दर्शयात्मानमस्मत करणगोचरम्।
प्रपन्नानां हि दुःखानि सहितं ते मुखाम्बुजम्॥
उरमाला में धमकता लगातार

(१७) रोग निवारण
न वासुदेव भक्तानामशुभं विद्यते क्वचित्।
जन्म मृत्यु जरा व्याधि भयं नैवोपजायते॥
इसको सम्पुट लगाकर विष्णु सहस्र नाम का पाठ।

1648

सं. से. सं. 58

6/4/83 श्री राम की वनवास में यात्रा
(अध्यात्म रामायण के अनुसार)

ब्रह्मा जी का सन्देश लेकर
नारद श्री राम के अन्तःपुर में
आकाश से उतर कर आये थे
और कहा कि ब्रह्मा जी ने कहलाया
है कि आप ब्रह्मा की प्रार्थना अनुसार रावण का
वध करने के लिये हुए हैं किन्तु
इधर आप तो राज्य में तिलक करने
जा रहे हैं — आप की प्रतिज्ञा का
क्या होगा? (२ सर्ग श्लोक 34)

श्री राम ने कहा — क्या कोई ऐसी
बात भी है जिसे मैं न जानता होऊँ (२-२-
३५) | कालक्रम से जिन जिन का प्रारब्ध
क्षीण होता जायगा उन उन दैत्यों
को मैं ही मारकर पृथ्वी का भार
क्रमशः उतारूँगा | रावण का वध करने
मैं कल वन जाऊँगा और चौदह वर्ष

२८२-

मुनि वेष धारण कर हूं ।।(श्लो. ३८)
उस दुष्ट को सीता-हरण के निमित्त से मैं
कुटुम्ब के सहित नष्ट कर दूंगा।(२.१.३९)
रावणस्य विनाशार्थं श्वो गन्ता दण्डकाननम् ।
चतुर्दश समास्तत्र ह्युषित्वा मुनिवेषधृक् ।।(३९)
सीताभिषेणन दुष्टं सकुलं नाशयाम्यहम्(३९)

इधर महाराज दशरथ ने महर्षि वसिष्ठ जी से राम के राज्याभिषेक की अनुमति माँगते हैं महर्षि की सम्मति या मन्त्री सुमन्त्र को वसिष्ठ के आदेशानुसार सामग्री इकट्ठी करने की आज्ञा देदी। श्री राम को आवश्यक नियम पालने के लिये महर्षि को उनके महल में भेजा। श्री राम द्वारा अभिवादन के उपरान्त त्रिकालदर्शी महर्षि वसिष्ठ जी श्री राम से कहते हैं "मैं भली प्रकार जानता हूँ आप लक्ष्मी के सहित प्रकट हुए साक्षात परमात्मा विष्णु हैं। हे राघव मैं जानता हूँ आप देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये, भक्तों की भक्ति सफल करने के लिये और रावण का नाश

करने के लिये ही अवतार लिया है। तथापि देवताओं की कार्य-सिद्धि के लिये मैं इस गुप्त रहस्य को प्रकट नहीं करता (२-२३,२४, २५)

जानामि त्वां परात्मानं लक्ष्म्या संजातमीश्वरम् (२३)
देवकार्यार्थसिद्ध्यर्थं भक्तानां भक्तिसिद्धये।
रावणस्य वधार्थाय जातं जानामि राघव (२-२-२४)
तथापि देवकार्यार्थं गुह्यं नोद्घाटयाम्यहम् (२-२-२५)

इधर इसी समय देवताओं ने सरस्वती देवी से प्रार्थना किया। प्रयोदय मा जाकर ब्रह्माजी की प्रेरणा से रामचन्द्र जी के राज्याभिषेक में विघ्न उपस्थित करने के लिये यत्न करो। प्रथम तो तुम मंथरा में प्रवेश करना और फिर कैकेयी में (४५)

एतस्मिन्नन्तरे देवा देवीं वाणीमचोदयन्।
गच्छ देवि भुवो लोकमयोध्यायां प्रयत्नतः। (२-२-४४)
रामाभिषेकविघ्नार्थं यतस्व ब्रह्मवाक्यतः।
मन्थरां प्रविशस्वादौ कैकेयीं च ततः परम्॥
(२-२-४५)

दशरथ ने कहा हे राम मुझ स्त्री-परवश भ्रान्तचित्त, कुमार्गगामी, पापी मुझ को बाँध कर राज्य ले लो। इससे तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा; मुझे भी असत्य स्पर्श न करेगा (२.३-६४,७०)। इस पर श्री राम ने पिता को ढाढ़स बंधाते हुए कहा "वन में रहने से तो मुझे राज्य से भी कोटि गुना सुख होगा (७४) इस से आपके सत्य की रक्षा होगी, देव लोगों का कार्य सिद्ध होगा और कैकेयी का प्रिय हित होगा। अतः वनवास में सब प्रकार महान गुण हैं अतः मैं शीघ्र ही जाना चाहता हूँ॥

राज्यात्कोटिगुणं सौख्यं मम राजन्वने सतः (७५)
त्वत्सत्यपालनं देवकार्यं चापि भविष्यति।
कैकेय्याश्च प्रियो राजन्वनवासो महागुणः (३-७५)
इदानीं गन्तुमिच्छामि व्येतु मातुश्च मत्सरः (७६)

राम को वन जाते देख साधु-समाज के दुःख को दूर करने के लिये मुनिवर वामदेव जी ने कहा "ये राम आदि चारों भगवान

1652

विष्णु हैं; मैं आपकी ही योगमाया सीता लक्ष्मीजी और लक्ष्मणजी शेषजी हैं" (२-५-११,१२) अब मैं रावण के वध के लिये आज ही वन जायेंगे (२-५-२२,२३)। इनके वनगमन में राजा या कैकेयी अनुमात्र भी कारण नहीं हैं। कल ही नारद ने इनसे पृथ्वी का भार उतारने की प्रार्थना की थी (२४) उस समय स्वयं राम ने भी उनसे यही कहा था कि कल मैं वन जाऊँगा" (२-५-२५)। भक्तों को गुण-कीर्तन का सुयोग देने एवं रावण को मारने के लिये लीला कर रहे हैं। (२-५-२६)

स एव विष्णुः श्रीरामो रावणादिवधाय हि॥ (२-५-२२)
गन्ताद्यैव वनं रामो लक्ष्मणेन सहायवान्॥ (२-५-२३)
राजा वा कैकेयी वापि नात्र कारणमण्वपि
पूर्वेद्युर्नारदः प्राह भूभारहरणाय वै॥ (२-५-२४)
रामोऽप्याह स्वयं साक्षाच्छ्वो गमिष्याम्यहं वनम् (२५)
भक्तानां भजनार्थाय रावणस्य वधाय च॥ (२६)

अब तीनों को लेकर सुमन्त्र रथ हाँकने ही वाले थे कि दशरथ ने कहा "सुमन्त्र ठहरो ठहरो" तब श्रीराम ने "चलो चलो" कहकर शीघ्रता

करने को कहा (४८-४९) पुरवासी 'हे राम, ठहरो,
भरत लगामें चिल्लाते हुए रथ के पीछे चले (४७)
तिष्ठ तिष्ठ सुमन्त्रेति राजा दशरथोऽब्रवीत् (४७)
गच्छ गच्छेति रामेण नोदितोऽचोदयद्रथम् (४८)
पौरास्तु बालवृद्धाश्च वृद्धा ब्राह्मणास्तथा।
तिष्ठ तिष्ठेति रामेति क्रोशन्तो रथमन्वयुः।। (२-५-४७)

भरद्वाज जी के आश्रम पर पधारे हुए श्री राम से कहते हैं "ब्रह्मा के प्रार्थना करने के लिए लिये आपके अनुसार लिया है; इसलिये आपके वनवास हुआ है और जो कुछ आप करेंगे वह सब मैं जानता हूं" (२-६-३८,३९)
यदर्थमवतीर्णोऽसि प्रार्थितो ब्रह्मणा पुरा।
यदर्थं वनवासस्ते यत्करिष्यसि वै पुरः।। (२-६-३९)
जानामि त्वां न कृत्याहं आत्मा स्वेच्छया स्ववान् (२-६-३९)
वाल्मीकि आश्रम पर पहुंचने पर प्रभु स्वयं महर्षि से कहते हैं "हम पिता की आज्ञा मानकर दण्डक वन आये हैं (४९) आप सब जानते ही हैं फिर हम इसका कारण क्या बतावें" (२-६-५०)
पितुराज्ञां पुरस्कृत्य दण्डकानागता वयम् (४९)
भवन्तो यदि जानन्ति किं वक्ष्यामोऽस्य कारणम् (५०)

(1654)

चित्रकूट में भरत जब प्रभु को अयोध्या लौटाने के लिये अपना अनशन करने का निश्चय कर धूप में कुशा बिछाकर पूर्व की ओर मुँह कर बैठ गये तब प्रभु ने अति विस्मित हो वसिष्ठ जी को नेत्रों से संकेत किया (२-९-३४ से ४० तक)। तब वसिष्ठ जी ने भरत को एकांत में ले जाकर श्री राम के वनवास का सारा गुप्त रहस्य बताते हुए कहा। "ये रावण को मारना चाहते हैं। इस लिये निःसंदेह वन को ही जायेंगे। कैकेयी के वरदान, निष्ठुर भाषण आदि देवताओं की प्रेरणा से ही हुए हैं। अतः राम को लौटाने का आग्रह छोड़ कर अयोध्या लौट चलो। रावण का कुल सहित संहार कर राम यहाँ। शीघ्र ही आ जायेंगे। (२-९-४५ से ४७)

रावणं हन्तुकामास्ते असिध्यन्ति न संशयः।
कैकेय्या वरदानादि यद्यन्निष्ठुरभाषणम्॥(४५)
सर्वं देवकृतं नो चेदेवं सा भाषयेत्कथम्।

तस्मात्प्रभाते हे तात! रामस्य विनिवर्तने ॥४६॥
निवर्तस्व वधे शुद्धसैन्यैर्भ्रातृभिः सहितः पुरम्।
भरतं सकुलं हत्वा शीघ्रमेवाभिषेक्ष्यति ॥४७॥
(२-८)

अब कैकेई ने नेत्रों में जल भरकर श्री राम से अपने कृत्यों के लिए प्रायश्चित भाव से क्षमा मांगी तब उसके प्रति प्रभु के हृदय के वचन हैं "मेरी प्रेरणा से ही देवताओं की कार्य-सिद्धि के लिये तुम्हारे मुख से शब्द निकले थे। इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है (२-९-६३)
मयैव प्रेरिता वाणी तव वक्त्राद्विनिर्गता (२-९-६३)
देवकार्यार्थसिद्ध्यर्थमत्र दोषः कुतस्तव (२-९-६४)

अगस्त्य जी ने श्रीराम को पूर्वकाल में राम ही के लिये इन्द्र का दिया हुआ धनुष, बाणों से भरे हुए कभी खाली न होनेवाले दो तरकस तथा एक रत्नजटित खड्ग दिया और कहा "हे राघव राक्षसों का संहार करो"
११
ददौ चापं महेन्द्रेण रामार्थे स्थापितं पुरा ॥३-३-४५
अक्षय्यौ बाणतूणीरौ खड्गं रत्नविभूषितम्।
जहि राघव भूभारभूतं राक्षसमण्डलम् ॥३-३-४६

(1656)

वनवास के तेरह वर्ष बीत चुके। खर दूषण का सैन्य से हार हो चुका अब अखिल ब्रह्माण्ड में सकल रावनों से हार की लीला की प्रारम्भिक घटना का आरम्भ किस प्रकार होना है यह प्रभु एकान्त में लक्ष्मण तक की अनुपस्थिति में कहते सीता से कहते हैं "रावण तुम्हारे पास भिक्षु का रूप धर कर आयेगा, अतः तुम अपने ही समान आकृति वाली अपनी छाया को कुटी में छोड़कर अग्नि में प्रवेश कर जाओ, और मेरी आज्ञा होने तक अदृश्य रूप में रहो। तदनन्तर रावण के मारे जाने पर तुम मुझे पूर्व वत पा लोगी" ।। (3-6-2/3)

रावणो भिक्षुरूपेण आगमिष्यति तेऽन्तिकम्।
त्वं तु छायां त्वदाकारां स्थापयित्वोटजे विश।। (3-6-2)
अग्नावदृश्यरूपेण वर्षं तिष्ठ ममाज्ञया।
रावणस्य वधान्ते मां पूर्ववत्प्राप्स्यसे शुभे।। (3-6-3)

शबरी के गुरु (मतंग) ऋषि ने कहा कि सनातन परमात्मा ने राक्षसों को मारने और ऋषियों की रक्षा के दशरथ जी के पुत्र राम रूप से अवतार लिया है। वे श्री प्रभु ही यहाँ आवेंगे। तू एकाग्रचित्त हो उनका ध्यान करती हुई यहीं रह। (अ-१०-१३/१४)

रामो दाशरथिर्जातः परमात्मा सनातनः।
रक्षसां वधार्थाय ऋषीणां रक्षणाय च ॥ (अ-१०-३)
आगमिष्यति हि एकाग्र ध्यान निष्ठा स्थिरा भव।
(अ-१०-१४)

स्वयंप्रभा ने हनुमान जी से बतलाया कि सहज विरक्ती है मां ब्रह्म लोक जाने हेतु उपासना कर कि यह सब प्रकार के प्राणियों से रहित स्थान रखा है (गुफा) में ही रह कर तप कर। त्रेता में [illegible] सनातन अप्रमेय नारायण प्रभु दशरथ के यहां जन्म लेकर पृथ्वी का भार उतारने के लिए वन में विचरेंगे। उनकी भार्या को ढूंढते हुए वानर तेरी गुहा में आवेंगे उनका सत्कार कर तू रामचन्द्र जी के पास जाकर स्तुति वन्दना स्तुति करके उनके। नित्यधाम को चली जायेगी। (४-६-५४/५६)

(658)

गच्छन्ती ब्रह्मलोकं सा मामाहेदं तपस्विनी ।
अत्रैव निवसन्ती त्वं सर्वप्राणिविवर्जिते ॥ (४-६-५३)
त्रेतायुगे दाशरथिर्भूत्वा नारायणोऽव्ययः ।
भूभारहरणार्थाय विचरिष्यति कानने ॥ (४-६-५४)
मार्गन्तो वानरास्तस्य भार्यामायान्ति ते गुहाम् ।
पूजयित्वाथ तान् नत्वा रामं सस्तुत्य यत्नतः । (५५)
यास्यसि भवनं विष्णोर्योगिगम्यं सनातनम् ॥
(४-६-५६)

चन्द्रमा मुनि ने सम्पाति से कहा था
"त्रेता में अव्यय नारायण दशरथ के पुत्र हो
रावण का वध करने अपनी भार्या सीता और
भाई लक्ष्मण के सहित दण्डक वन में प्रवेश करेंगे।
वहाँ दोनों भाइयों के तपोवन से चले जाने
पर रावण जानकी जी को सूने आश्रम से चोर
के समान ले जाकर लंका में रखेगा। उन्हें
खोजते हुए कुछ वानर समुद्र तट पर
आवेंगे। वहीं तेरा साथ उनका समागम
होगा — इसमें सन्देह नहीं। तब तू उन्हें
सीता का पता बता देना। उसी समय
तेरे नये पंख उत्पन्न हो जायँगे।"
(४-८-५२)

त्रेतायुगे दाशरथिर्भूत्वा नारायणोऽव्ययः ।
भूभारहरणार्थाय दण्डकानागमिष्यति ॥ ४८
सीतया भार्यया सार्धं लक्ष्मणेनानुजेन तु ।
तत्र प्रभोर्जनकजां मायया रहिते वने ॥ ४९
रावणश्चोरवन्नीत्वा लंकायां स्थापयिष्यति ।
तस्याः सुग्रीवनिर्देशाद्वानराः परिमार्गणे ॥ ५०
न्यागमिष्यन्ति जलधेस्तीरे सत्र सम्प्रागताः ।
त्वत्सकाशं कारणवशाद् विश्वासितो संशयश्चापि
तदा सीतास्थितिं तेभ्यः कथयस्व यथार्थतः ।
तदैव ते पक्षौ द्वौ उत्पत्स्येते पुनर्नवौ ॥ ५१ ५२

हनुमानजी के घूंसे की चोट से रक्त
बहाती हुई गिरने पर लंकी राक्षसी ने
हनुमानजी से कहा। पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने मुझसे
कहा था, "अट्ठाईसवें चतुर्युग के त्रेता युग
में दाशरथी रामचन्द्र अवतीर्ण होंगे। वे रामजी
भाई लक्ष्मण एवं भार्या सीता सहित
दण्डकवन आयेंगे। वहाँ सीता को रावण हर
ले जायेगा। राम के साथ सुग्रीव की मित्रता
होगी। सुग्रीव जानकी जी की खोज के

(1660)

लिखे बातें को मैं जोगा। उनमें से एक वानर
रात्रि में तेरे पास आयेगा। वह तुझसे तिरस्कृत
होकर तुझे धक्का मारेगा। जिस समय
तू उसके धक्के से व्याकुल हो जाय तभी
रावण का अन्त होगा—इसमें सन्देह नहीं
(५-१-४८/५३)

पुरा हि ब्रह्मणा प्रोक्तं ह्यष्टाविंशतिपर्यये।
त्रेतायुगे दाशरथी रामो नारायणोऽव्ययः॥ (५-१-४८)
सभार्यो राघवो भ्रात्रा गमिष्यति महावनम्।
तस्य सीतां महाभागां रावणोऽपहरिष्यति॥ (५-१-४९)
पश्चाद्रामेण साचिव्यं सुग्रीवस्य भविष्यति।
सुग्रीवो जानकीं द्रष्टुं वानरान्प्रेषयिष्यति॥ (५-१-५१)
तत्रैको वानरो रात्रौ नगरीमागमिष्यति तेऽधिकम्।
लब्धश्च भर्त्सितः सोऽपि त्वां धर्षयिष्यति सुसंस्थिता॥ (५-१-५२)
तेन दृष्टा त्वमव्यग्रा भविष्यसि यदा तदा।
तदैव रावणस्यान्तो भविष्यति न संशयः॥ (५-१-५३)

राम ने यक्षों से कहा 'पूर्वकाल में
मुझे ? पुनरराम ने शाप दिया था कि मैं
लंका में सनातन पुरुष परमात्मा

अनुसार से मैं अपने उन्हीं के हाथ से तुम्हें
सेः रिवेद अपने पुत्र पौत्र बांधवों
सहित मरे जानो। इसीसे उनकी रावण ने
मैंने लिखे अवतार लिया है मैं मनुष्य रूप
धारी। (६-८-४६/४८)

"प्रहरस्वेन मनुष्येण शृणोऽहं राक्षसेश्वर।
इत्सस्य से च अर्थे परमात्मा सनातनः सुखं
तेनैव पुत्र पौत्रैश्च बान्धवैश्च समन्वितः।
हनिष्यसे मनुष्येण इत्युक्त्वा मां हरिर्गतः॥४७
स रावण हरः सं जातो मनुष्ये मां हनिष्यसि॥४८

नारदजी ने कुम्भकर्ण से कहा "इसलिए
देवतागण तुम दोनों भाइयों से अत्यंत
पीड़ित विष्णु के पास जाकर प्रार्थना
की कि आप मनुष्य होकर इस रावण
रूप कंटक को नष्ट कीजिये। तब सत्य-
संकल्प विष्णु ने कहा "अच्छा। कहा
के रघुकुल में राम नाम से विख्यात
हुए हैं। वे तुम सब को मारेंगे।
(६-८-६१/६४)

1662

एवमेवं पीडिता देवाः सर्वे विष्णुमुपागताः ।६१
ऊचुस्ते देवदेवेशं स्तुत्वा भक्त्या समाहिताः ।
जहि रावणमाहूतोऽयं देव त्रैलोक्यकण्टकम् ॥६२
यतस्त्वं मानुषो भूत्वा जहि रावणकण्टकम् ॥६३
तथेत्याह महाविष्णुः सत्यसङ्कल्प ईश्वरः ।
जातो रघुकुले देवो राम इत्यभिविश्रुतः ॥६४
स हनिष्यति तं सर्वं नित्यशुद्धगुणमयो मुनिः ।
(६-७-६५)

अध्यात्म रामायण उत्तरकांड में सर्ग ८ श्लोक ३८ में प्रभु श्रीराम काल से कहते हैं "अब मैं जहाँ से आया था वहीं फिर चला जाऊँगा। मेरा सारा मनोरथ पूर्ण हो गया।"

अहं रोऽस्त्वागमिष्यामि यत एवाहमागतः ।
मनोरथस्तु सम्प्राप्तो न मेऽद्यास्ति विचारणा ॥ ३८
(७-८-३८)

(1663)

उपरोक्त कथानकों से स्पष्ट है कि वनगमन से लेकर रावण का वध कर अयोध्या लौटने तक की प्रत्येक छोटी से छोटी घटना भी अवतार के पहले से ही प्रभु श्री राम ने पूर्व निर्धारित कर रखी थी।

श्री राम निरीश्वर हैं अर्थात इनका कोई प्रेरक नहीं (अध्यात्म रामा. ६ स. ३ श्लोक २९)। इनका कोई प्रभु नहीं ये स्वयं ही सबके प्रभु हैं। ये सर्वथा स्वतंत्र हैं
राजाराम स्ववस भगवानू (रा.मा. २/२१८
ये सृष्टि संचालक हैं अतः अन्य किसी की इच्छा से संचालित नहीं होते बल्कि सृष्टि की बड़ी से बड़ी हस्ती भी इन्हीं की इच्छा से प्रेरित होती है– शारदा, मन्थरा, दशरथ कैकेयी भी इन्हीं की इच्छा से प्रेरित हुए थे "सबकिछु

1665

"कीन्ह राम हरन जानी" (रा.च. मा. २-२९७) स्वेच्छा से ही श्रीराम ने वन गमन किया था।

भगवान शंकर जगदम्बा उमा से स्पष्ट निश्चित मत कहते हैं "अवतरेउ अपने भगत हित निज तंत्र नित रघुकुल मनि॥ (रा.च.मा. १-५१)

"उमा दारु जोषित की नाईं। सबहि नचावत रामु गोसाईं॥ (रा.च.मा. ४-११)

नारद जब प्रभु को शाप दे के बाद माया हट जाने पर क्षमा मांगते हैं तब प्रभु के श्रीमुख के वचन हैं "मृषा होउ मम श्राप कृपाला। मम इच्छा कह दीनदयाला (रा.च.मा. १-१३७)

*एवं अपने शाप को प्रभु द्वारा झूठे करवाना चाहते हैं

श्री राम जय राम जय जय राम

मानस भारती Sept 83 Page 189
में प्रकाशित

सं. क्र. 59 1665

1/5/83

चरन पादुका

प्रभु श्री राम पिता की आज्ञा मान कर राज्य त्याग कर वन-गमन हो गये और निकल कर ~~निकल~~ वे पैरों में पादुका बिना पहने ही साधु की तरह चल पड़े।

महर्षि भरद्वाज के आश्रम से निकल कर आगे बढ़ते हैं तब पथ में पड़ने वाले ग्रामीण नर नारी उनको बिना पनही चलते देख कर अति दुखित हो कर कहते हैं

ए बिचरहिं मग बिनु पदत्राना।
रचे बादि बिधि बाहन नाना॥

श्री राम के बिना पनही पैदल पथ वन में चलने के कारण अपने हृदय के अन्तस्तल में शूल के समान चुभते हुए दुख-को भरत लाल भरद्वाज जी के

सामने प्रकट करते हैं

'राम लखन सिय बिनु पग पनहीं।
करि मुनि बेष फिरहिं बन बनहीं।।
(२-२११)

प्रायः यह शंका उठायी जाती है कि इधर तो भरत कहते हैं राम लखन सीता बिना पनही के नंगे पाँव ही वन में विचरण करते हैं एवं दूसरी ओर जब चित्रकूट पर्वत के नजदीक पहुँच कर सोच कर रहे हैं संकल्प विकल्प मन में उठ रहे हैं कि पता नहीं प्रभु मुझे अपनावेंगे या मेरा आना सुन कर अन्यत्र चले जायेंगे। उसी समय कहते हैं

'मोरे सरन रामहि की पनही।
राम सुस्वामि दोसु सब जनही।।
(२-२३४)

तो राम की पनही की कल्पना उनके मन में किस आधार पर उठती है। एवं चित्रकूट विदा

करते समय श्रीराम ने कृपा करके अपनी पाँवरी दी कहीं से जान कि इस प्रकार प्रभु अपने ऐश्वर्य को छुपाये कर लीला कर रहे हैं।

"प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।"

इन एक दूसरे के विपरीत तथ्यों का सामंजस्य नहीं हो पा रहा है।

भरतलाल ने यहाँ स्पष्ट शब्दों में नहीं माँगा है सिर्फ अवलम्ब माँग रहे हैं जो प्रभु की इच्छा हो दे दें। किन्तु अन्तर्यामी प्रभु जानते हैं भरत का मन मेरी पादुका प्राप्त करने का है अतः अपनी चरन पादुका ही देकर भगवान ने प्रभु अपने भक्त की आन्तरिक इच्छा की पूर्ति करते हैं। यह तो रामचरित मानस से जानकारी मिलती।

(1668)

"सो अवलंब देव मोहि देई।
अवधि पारु पावौं जेहि सेई॥"
(2-306)

किंतु नरलीला करने वाले प्रभु ने पादुका दी कहां से इस विषय में श्री रामचरितमानस मौन है अतः शंका समाधान नहीं हो पाया।

अध्यात्म रामायण अयोध्या कांड सर्ग ९ श्लोक ४९ में भरत लाल स्पष्ट शब्दों में प्रभु की चरण पादुकाएं मांगते हैं एवं श्लोक ५० में भरतजी ने उनके चरणों में दो पादुकाएं पहना दीं और प्रभु ने वही पादुकाएं (खड़ाऊं) भरत को दे दीं। श्लोक ५४ में उन रत्न जटित पादुकाओं को लेकर भरत ने श्री रामचन्द्रजी की परिक्रमा की और उन्हें बारम्बार प्रणाम किया।

पादुके देहि राजेन्द्र राज्याय तव पूजिते ॥४९
इत्युक्त्वा पादुके दिव्ये योजयामास पादयोः।
रामस्य ते ददौ रामो भरतायातिभक्तितः ॥५०
गृहीत्वा पादुके दिव्ये भरतो रत्नभूषिते।
रामं पुनः परिक्रम्य प्रणनाम पुनः पुनः ॥५१

प्रश्न उठता है कि भरतजी जब श्रीराम को लौटाने की इच्छा से ही गये थे तो बरबार पादुका ले जाने का प्रयोजन क्या था। भरतजी ने ~~शायद~~ सम्भवतः सोचा हो कि राज्यतिलक हो जाने के बाद तो प्रभु का बिना खड़ाऊँ के चलना मर्यादा के विरुद्ध होगा। अतः रत्न-जड़ित खड़ाऊँ साथ ले गये। यह भी संभव उनके मन में हो कि प्रभु श्रीराम सत्यप्रतिज्ञ हैं। अतः जब एकबार वन को प्रस्थान कर चुके तो शायद राज्य ग्रहण करना अथवा लौटना दोनों ही बातें स्वीकार न करें उस दशा में उनके चरणों का

स्पर्श करा कर उनको प्रतिनिधि स्वरूप ही खड़ाऊँ दी। स्वयं सिंहासन पर आसीन रहने की अपेक्षा मैं तो उनका पादुका का राज्य काज सदा हुआ।

जिस प्रकार भक्त भरतजी ने प्रभु की खड़ाऊँ पहराने की इच्छा अर्थात मानसिक संकल्प किया उसी प्रकार अन्तर्यामी भक्तवत्सल प्रभु ने भरत के उस मानसिक अर्पित वस्तु को स्वीकार कर लिया। वह तो प्रभु पदपद्मों की पादुका बन चुकी। अवतरणरूपना से बाह्य लीला मात्र थी। ऐसे तो अपने प्रसाद स्वरूप में प्रतिनिधि रूप में प्रभु ने भरत को दीं। ये पादुकाएँ प्रभु के श्री चरणों के स्पर्श मात्र से जड़ से चैतन्य बन चुकी थीं। तो सिंहासन पर स्थापित होने के बाद राजकाज में भरत को आज्ञा देने लगीं।

नित पूजत प्रभु पाँवरी प्रीति न हृदयँ समाति।
मागि मागि आयसु करत राज काज बहु भाँति॥ (2-325)

इस तरह सत्य-प्रतिज्ञ प्रभु श्री
राम की चौदह वर्ष वनवास करने एवं
भूसुर काज करने की प्रतिज्ञा भी
पूरी हो गयी एवं इधर प्रबन्ध के
राज्य सिंहासन से प्रभु के खड़ाऊँ [illegible]
~~करने उठने की~~ पादुकाओं के माध्यम
सेवन भी रह गये एवं प्रभु के सेवक
रूप की भरत की लालसा भी पूरी हो
गयी।

(672)

(383)

3/5/83

आज बिरद निभा दे न भगवान। टेक

असँख्य अधम उधारे राघव
अब मुझे उधारो तो जानूँ।

परस पाहन पावन किये राघव।
मुझे पावन करो तो जानूँ॥

पाहन सिंधु तिराये राघव।
मुझे भव सिन्धु तिराओ तो जानूँ॥

कुटि कुटि जा जा दर्श दिये राघव।
इस दीन को दर्श दो तो जानूँ॥

अवध महल पलने झूले राघव
'शंकर' हिय झूलो तो जानूँ॥

2/5/83

राम छमहु अपराध सब निस दिन केरा।
अपनावहु अब मोहि जानजन पुत्र तेरा।

जैसा हो अब तक आपके चरनन महँ।
वैसा रहूँ निस दिन उनके चरनन महँ।।

वैसा सकूँ स्याम मुख भूलमिटावन मांहि
भूल ही भूल सके सुझे. शंकर हिय मांहि

(1674)

(सं.सं.नं 60)

2/5/83 — काल —

अध्यात्म रामायण उत्तर काण्ड सर्ग 8 के श्लोक 22 से 25 तक में वर्णित है कि ब्रह्माजी का सन्देश लेकर जब मुनि वेष धारण किये काल भगवान प्रभु श्री रामचन्द्रजी के पास आते हैं तब प्रभु से कहते हैं "मैं आप का ज्येष्ठ पुत्र हूं और काल नाम से प्रसिद्ध हूं। पूर्वकाल में समस्त लोकों का संहार कर एक मात्र आप ही रह गये थे। फिर आपने अपनी माया से संयोग कर पहले आपने प्रभु मुझको तथा जल में शयन करने वाले अनन्त नामक फणधारी शेष नाग को रचा।"

भार्यया सङ्गतस्त्वं मामादौ पुत्रमजीजनः।
तथा भोगवतं नागमनन्तमुदके शयम्॥
(7-8-25)

इसपर कहता है काल कि मैंने बादमें प्रभु
को देख कर मार कर उनको [illegible]
पूर्वापर को पृथ्वी का ढाँचा। फिर प्रभु की नाभी कमल
से ब्रह्मा को उत्पन्न किया। (7-8-2024)

[illegible]

उपरोक्त उद्धरण ने यह तथ्य स्पष्ट रूप से प्रमाणित करता है कि परब्रह्म ने सबसे पहले "काल" यानि मृत्यु की तदुपरांत शेष भगवान की उत्पत्ति की।

यह तो सर्वविदित है ही कि क्षीर सागर में शेष शायी प्रभु के नाभी कमल से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। सारे लोकों की सृष्टी ब्रह्माजी ने की है।

सबसे पहले काल यानि वायु की सृष्टि होती है फिर प्रभु के देह के वायु से पृथ्वि बनती है। यानि अविनाशी तो सिर्फ पर ब्रह्म ही है बाकी सभी नाशवान ही हैं। आकाश में विनाश नक्षत्रों (तारों) का कला नाश होता है- उल्कापात होता देखा जाता है। महाप्रलय में

पृथ्वी नाश होकर जलमग्न हो जाती है। सभ्यताओं के नाश को साक्षी इतिहास है। अखिल विश्व का नाश अनित्यता में ~~[illegible]~~ अपने अवश्यम्भावी है हालांकि इस नाश का समय, स्वरूप, तरीके भिन्न भिन्न होते हैं। जीवों के नाश तो दिन रात हम आँखों से देखते ही हैं। प्रभु की माया की सबसे बड़ी विचित्रता तो यही है कि इस नाश की तमाम सत्यता को ही हम सब सेवक ही असत्य मान बैठे हैं कि हमारा यह शरीर हमेशा बना रहेगा।

इस नाश की सत्यता को मान कर यदि हम अपने समय का कुछ अंश भगवत् स्मरण चिन्तन में लगाये रखें; अपने सांसारिक, गार्हस्थ जीवन, शरीर सम्बन्धी अन्य

व्यक्तिगत सम्बन्धी मंतव्य की बागडोर उस विश्वनियंता प्रभु के हाथ सौंप कर निश्चिंत रहें तो बेड़ा पार है। किसी उर्दू कवि ने ठीक ही कहा है "करे है कोई साहब, करैया एक और है"।

1678 प्रसं. सं. 61

6/5/83

— अहल्या —
(गृहस्थाश्रम संस्कारकों से)

गौतम विधिवत् श्री हरि की
आराधना करते थे। उनके
ब्रह्मचर्य से संतुष्ट होकर ब्रह्मा जी
ने लोक सुन्दरी अहल्या उनको सेवा
के लिये उनको दी (१-४८-२०)। इन्द्र
उनके रूप लावण्य पर मुग्ध था।
एक दिन गौतम की अनुपस्थिति में
इन्द्र गौतम का रूप धारण कर आश्रम
में आकर अहल्या के साथ रमण
किया। वह भाग ही रहा था कि गौतम
ने उसे देख लिया और क्रुद्ध हो
शाप दिया कि "तेरे शरीर में सहस्र
भग हो जायँ" (१-४८-२८)। आश्रम
में प्रवेश कर अहल्या को शाप
दिया "तू यहाँ से आश्रम में शिला
में निवास कर। यहाँ तू निराहार रह
कर धूप, वायु नभ आदि को

करती हुई दिन रात तपस्या कर
और सब प्राणियों से अदृश्य में स्थित
परमात्मा राम का ध्यान करो। उससे
यह देव आश्रम विविध जीवों से
रहित हो जायगा। (१-५-२८/२९)
कई हजार वर्ष बीत जाने पर यहाँ
श्रीराम लक्ष्मण के साथ आयेंगे (३०)
वे तेरी आश्रयभूत शिला पर अपने
दोनों चरण रखेंगे उस समय तू पाप
मुक्त हो जायगी। (३१/३२) ऐसा कह
गौतम हिमालय पर चले गये।

उसी दिन से अहल्या वायु भक्षण
करती हुई तपस्या में स्थित है आपके
(श्री राम) चरण-रज के स्पर्श की कामना से
आज तक अलक्षित रह कर रहती है।
(३३-३४) हे राम! अब तुम ब्रह्माजी की
पुत्री गौतम-पत्नि अहल्या का
उद्धार करो। ऐसा कह विश्वामित्र जी
ने श्री राम का हाथ पकड़ कर

(उन्हें तप में स्थित अहल्या को दिखाया)
तब श्रीराम ने अपने चरणों से उस
शिला को स्पर्श कर तपस्विनी अहल्या
को देखा (३५-३६) और मैं राम हूँ
ऐसा कहकर प्रणाम किया। तब
अहल्या ने पीताम्बर धारण
किये श्री राम को देखा (३७) उनकी
चारों भुजाओं में शंख-चक्र, गदा, पद्म
सुशोभित थे, कंधों पर धनुष बाण
थे तथा साथ में लक्ष्मण जी थे (३८)

पावयस्व मुहुर्मामि मां हल्या ब्रह्मसाड् सुतास्मि (३५
नत्वाम राघवोऽहल्यां रामोऽहमिति चाब्रवीत्
ततो ददर्श रघुश्रेष्ठं पीतकौशेयवाससम् (३६)
चतुर्भुजं शङ्खचक्रगदापद्मधारिणम्।
धनुर्बाणधरं रामं लक्ष्मणेन समन्वितम्
(३८)

इस प्रकार चतुर्भुज स्वरूप में श्रीराम
का दर्शन पा अहल्या विस्मित हुई
कर साष्टांग दंडवत कर पुलकित हो
गद्गद वाणी में स्तुति करने लगी।

प्रभु की स्तुति करते हुई कहती हैं जो अकेले ही संसार की उत्पत्ति, स्थिति और नाश के लिये अपनी माया के गुणों को आश्रय कर, ब्रह्मा, विष्णु और महादेव नामक विभिन्न रूप धारण करते हैं वे स्वतंत्र परिपूर्ण आत्मा आप ही हैं (५०) आप ओंकार के वाच्य हैं तथा आप ही वाणी के अगोचर परम पुरुष हैं। वाच्य-वाचक (शब्द-अर्थ) भेद से आप ही सम्पूर्ण जगत रूप हैं (५३)

अयं हि विश्वोद्भवसंयमानामेक
स्वमायागुणबिम्बितो यः।
विरिञ्चिविष्णवीश्वरनामभेदान्
धत्ते स्वतन्त्रः परिपूर्ण आत्मा (५०)
ओंकार इति वाच्यस्त्वं रामवाचामविषयः पुमान्
वाच्यवाचकभेदेन भवानेव जगन्मयः (५३)

प्रभु श्री राम की वन्दना स्तुति, गुणगान आदि के बाद अहल्या प्रभु की कृपा

(१६४२)

प्रार्थना करती हूँ हे देव। मैं जहां कहीं भी रहूं वहीं सर्वदा आपके चरणकमलों में मेरी अहैतुकी भक्ति बनी रहे (अध्यात्म रामा: १-५-५८)

देव मे यत्र कुत्रापि स्थिताया अपि सर्वदा।
त्वत्पादकमले सक्ता भक्तिरेव सदास्तु मे (१-५-५८)

श्रीरामचरितमानस में आता है

पद कमल परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना (१-२११)

फिर प्रभु की आज्ञा पा अपने पति के पास चली गयी।

परिक्रम्य प्रणम्याथ सानुज्ञाता ययौ पतिम् (१-५-६०) (अध्या०)

इहि भाँति सिधारी गौतम नारी बार बार हरि चरन परी।
जो अति मन भावा सो बरु पावा गै पति लोक अनंद भरी। (रा.च.मा. १-२११)

यद्यपि पातक थे तथापि शिलावत् अचल रह कर तप के प्रभाव से अति दुर्लभ प्रभु के श्री चरणों के स्पर्श का सौभाग्य प्राप्त किया और इस तप के प्रभाव से प्रभु के सामने दिव्य देह धारण कर पतिलोक गयी

परसि जासु पद पंकज धूरी। तरी अहल्या कृत अघ भूरी॥ (रा.च.मा. १-२२३)
जे परसि मुनिबनिता लही गति रही जो पातकमई (१-३२४)

उनही चरणों की वन्दना करते रहें

॥ श्री राम जय राम जय जय राम ॥

दैनंदिनी ६२ — (1683)

9/5/83 — सीताजी का अग्नि प्रवेश —
(अध्यात्म रामायण से)

प्रभु श्री राम के राज्याभिषेक के बाद उनका अभिनन्दन करने के लिये महर्षि अगस्त्यजी के साथ विश्वामित्र, अत्रि, कण्व, दुर्वासा, भृगु, अंगिरा, कश्यप, वामदेव, अत्रि तथा सप्तर्षि प्रभु के दरबार में आये (अध्यात्म रा. ७-१-६/७)।

प्रभु के कुशल प्रश्न के बाद अगस्त्यजी कहते हैं "हे रघुश्रेष्ठ! जानकी के सहित अग्निदेव ने आपको सुख से जीत लिया है" (अध्यात्म. ७-२-६४)।

अग्निस्ते सुरतो जातो छायाया रघूत्तम ॥ (७-२-६४)

श्री राम-चरित मानस में प्रभु श्री राम के विश्वरूप का ~~[illegible]~~ वर्णन करती हुई पत्नी मन्दोदरी रावण से कहती हैं "आनन अनल अंबुपति जीहा" (६-१५)

16-84

इसीलिये हमारे शास्त्रों ने अग्नि को इतना पवित्र माना है कि अग्नि में अपवित्र वस्तु डालने की मना ही है; अग्नि को साक्षी रख कर मित्रता, विवाह आदि में जो प्रतिज्ञायें की जाती हैं उन्हें आजन्म निभाने का विधान है। आर्य संस्कृति में आदि काल से यज्ञ आदि में अग्नि में आहुतियें दी जाती रही हैं ताकि ये आहुतियां अग्नि के माध्यम से परब्रह्म तक पहुंच जायें।

अग्निदेव द्वारा दी गई चरु के फल स्वरूप ही दशरथ घर श्री राम नर तन धारण करते हैं। समय समय पर ज्वालामुखी से निकलती आग की लपटें एवं धुंए से स्पष्ट है कि पृथ्वी के अंतस्तल में अग्नि धधकती ही रहती है उसी पृथ्वी से सीता जी वैकुंठ से जनक घर आती हैं। सीता जी श्री राम की नित्य-शक्ति है

एक दिन क्रीड़ाभवन में एकान्त में सीता जी श्री रामजी से कहती हैं'' हे देव देवताओं ने एकान्त में मुझसे आपके वैकुण्ठ पधारने के विषय में कहा है कि तुम चित् शक्ति से युक्त होकर ही राम हम सबको और अपने सनातन स्थान वैकुण्ठ को छोड़ कर पृथ्वी पर ठहरे हुए हैं। राम सदा तेरे साथ ही रहते हैं। यदि तू पहले वैकुण्ठ चली जाय तो श्री राम वहाँ आकर हमें सनाथ कर देंगे'' (अध्या. ७-४-३८/३९)

देव देवाः समागम्य मामेकान्तेऽब्रुवन्वचः।
बहुशोऽर्थयमानास्ते वैकुण्ठागमनं प्रति ॥(३८)
त्वया समेतश्चिच्छक्त्या रामस्तिष्ठति भूतले।
विसृज्य स्वं स्वकं धाम वैकुण्ठं च सनातनम्॥
आस्ते त्वया जगद्धात्रि रामः कमललोचनः।
अग्रतो याहि वैकुण्ठं त्वं तथा चेद्रघूत्तमः ॥३९
आगमिष्यति वैकुण्ठं सनाथान्नः करिष्यति॥

सीता के ये वचन सुनकर श्री रामचन्द्र ने कहा'' देवि, मैं यह सब जानता हूं। मैं तुमसे

(1686)

सम्प्रति लोकापवाद के मिस से तुम्हें लोकनिंदा से डरने वाले अन्य पुरुषों के समान वन में त्याग दूंगा। वहां वाल्मीकि आश्रम के पास तुम्हारे दो बालक होंगे। तुम मेरे पास फिर आवोगी और लोकों की प्रतीति के लिये आदर पूर्वक शपथ करके तुरंत ही पृथ्वी के छिद्र द्वारा वैकुंठ को चली जावोगी। पीछे मैं भी वहां आ जाऊंगा, बस अब यही निश्चय रहा। (७-४-४१/४४)

देवि जानामि सकलं तत्रोपायं वदामि ते।
कल्पयित्वा मिषं देवि लोकवादं त्वदाश्रयम्॥४१
त्यजामि त्वां वने लोकवादाद्भीत इवापरः।
भविष्यतः कुमारौ द्वौ वाल्मीकेराश्रमान्तिके॥४२
इदानीं दृश्यते गर्भः पुत्रलाभस्य सूचकः।
लोकानां प्रत्ययार्थं हि कृत्वा शपथमादरात्॥४३
भूमेर्विवरमात्रेण वैकुण्ठं यास्यसि द्रुतम्।
पश्चादहं गमिष्यामि एष एव सुनिश्चयः॥४४

उपरोक्त प्रसंग गर्भवती सीताजी को त्याग देने सम्बन्धी श्री राम पर लगाये जाने वाले लांछनों का समाधान है।

उपरोक्त पूर्वनिश्चित योजनाओं के अनुसार ही भविष्य की सारी घटनायें घटित करते हैं प्रभु - सीताजी का त्याग वन में लव कुश का जन्म, प्रभु द्वारा बुलाये जाने पर सीता जी वाल्मीकि मुनि को आगे कर अश्वमेध यज्ञशाला में प्रवेश करती हैं एवं समस्त देवगण, ब्रह्मा की उपस्थिति में मुनियों प्रजाजनों के समक्ष सीताजी उत्तर की ओर मुख एवं नीचे को नेत्र किये हाथ जोड़े कर कहती है "यदि मैं भगवान राम के अतिरिक्त अन्य पुरुष का मन से भी चिंतन नहीं करती तो पृथ्वी देवी मुझे आश्रय दें" (७-९७-१४)

रामादन्यं यथाहं वै मनसापि न चिन्तये।
तथा मे धरणी देवी विवरं दातुमर्हति ॥
(७-९७-१५)

सीताजी के इस प्रकार शपथ लेते ही भूमितल से एक अद्भुत परम दिव्य और अत्यन्त श्रेष्ठ सिंहासन प्रकट हुआ (४१) वह नागराजों द्वारा धारण किया हुआ था। पृथ्वी देवी ने जानकीजी को अपनी दोनों भुजाओं से प्रेमपूर्वक उठाकर उनका स्वागत किया और उन्हें आसन पर बैठा लिया (४२-४३)। तब से श्री रामचन्द्र जी सब भोगों से विरक्त होकर निरन्तर आत्मचिन्तन करते हुए एकान्त में रहने लगे (५२)।

सीताजी जब वैकुंठ से धरातल पर अवतरित होती हैं तब एक जाव द्वार से वैकुंठ फिर जाती हैं तब भी पृथ्वी के मध्य भाग से ही आती और जाती हैं। पृथ्वी के अन्दर निरंतर अग्नि रहती है अर्थात् इतनां ही बार अग्नि प्रकट रूप से अग्नि से आती जाती है।

अब लंका से परोक्ष में अग्नि प्रवेश का प्रसंग चल रहा था। अब प्रत्यक्ष अग्नि प्रवेश प्रसंग पर आ जायँ।

श्री राम अपनी चित्त-शक्ति सीता जी से अलग नहीं रह सकते। वनवास के तेरह साल बीत गये एवं प्रभु के अवतार कार्य का एक ही अखिल कदम लंका वासी राक्षसों का उद्धार बाकी रह गया – इसलिए सीता हरण का नाटक रचना होगा, पर सीता जी से अलग भी राम रह नहीं सकते। अग्नि प्रभु के मुख से जन्म लेती है अतएव रखते हैं। सूत वध के बाद प्रभु प्रत्यक्ष रूप में असली सीता जी को अग्नि में प्रवेश करवाकर अपने पास ही अग्नि के [illegible] [illegible] से रख लेते एवं माया मयी छाया रूप सीता जी को पृथ्वी पर प्रकट रूप में रख छोड़ते

(1690)

को निश्चय कर सीताजी ने ~~[illegible]~~ लक्ष्मणलाल की अनुपस्थिति में कहते हैं — हे पुत्री! रावण तुम्हारे पास भिक्षु का रूप धारण कर आयेगा अतः तुम अपने ही समान आकृतिवाली अपनी छाया को कुटी में छोड़कर अग्नि में प्रवेश कर जाओ और वहाँ मेरी आज्ञा से अदृश्य रूप से एक वर्ष रहो। तदनन्तर रावण के मारे जाने पर तुम मुझे पूर्ववत् पा लोगी। (3-6-23)

रावणो भिक्षुरूपेण आगमिष्यति तेऽन्तिकम्।
त्वं तु धात्वा स्वदृशाकारां स्थापयित्वोटजे विशा॥(2)
अग्नावदृश्यरूपेण वर्षं तिष्ठ ममाज्ञया।
रावणस्य वधान्ते मां पूर्ववत्प्राप्स्यसे शुभे॥(3)

श्री राम के वनवास का आंतरिक उद्देश्य भी सिद्ध हो चुका (रघुकुल रावण का उद्धार एवं विभीषण को लंका का राज्य मिल चुका) इधर वनवास

की चौदह साल की अवधि भी पूरी हो रही है – अवध लौटने के पहले असली सीता को अपने पास बुला कर पंचवटी में सीता को दिये गये आश्वासन को पूरा करना प्रभु को इष्ट है। अतः जब श्री राम के आदेश से सीताजी लंका से लाई जाती हैं तब छायारूपिणी सीता से प्रभु ने बहुत ही न कहने योग्य (उनके चरित्र के विषय में सन्देह युक्त) बातें कहीं (६-१२-५६) उन वाक्यों को सहन न कर सकने के कारण सीताजी ने लक्ष्मणजी से कहा भगवान राम के विश्वास के लिये और लोकों के निश्चय कराने के लिये तुम शीघ्र ही मेरे अग्नि प्रज्वलित करो" (६-१२-६६)

अवाच्यवादाद्धेतुः प्राह सा रघुनन्दनम्
अपहृत्य मारीचा सा सीता लवचसा राघवोदितम्
लक्ष्मणं प्राह मे शीघ्रं प्रज्वालय हुताशनम् ।
विश्वासार्थं हि रामस्य लोकानां प्रत्ययाय च ।। (६५)

1692

श्री राम की भी सम्मति समझ
कर लक्ष्मण जी वैसा ही कर चुपचाप
श्री राम के पास जाकर खड़े हो गये।
सीता जी ने देवता और ब्राह्मणों को
नमस्कार कर, अग्नि के पास जा
हाथ जोड़ कर कहा "यदि मेरा हृदय
श्री रघुनाथ जी को छोड़ कर कभी
दूसरे पर नहीं जाता तो समस्त लोकों
के साक्षी अग्निदेव मेरी सब ओर
से रक्षा करें" ऐसा कह, अग्नि की
परिक्रमा कर निर्भय चित्त से उस
प्रज्वलित अग्नि में घुस गयीं। (८०-८२ ८१/८३

बद्धाञ्जलिपुटा चेदमुवाचाग्निसमीपतः।
यथा मे हृदयं नित्यं नापसर्पति राघवात्॥(८१)
तथा लोकस्य साक्षी मां सर्वतः पातु पावकः।
एवमुक्त्वा तु वैदेही परिक्रम्य हुताशनम्(८२
विवेश ज्वलनं दीप्तं निर्भयेन हृदा सती (८३)

ब्रह्मादि देवताओं द्वारा श्री राम
की स्तुति करने के बाद लोक साक्षी

अग्निदेव ने अपनी गोद में जानकी जी को लिये हुए प्रकट होकर शरणागत-दुःखहारी श्री रघुनाथजी से कहा "रघुवीर! पहले तपोवन में मुझे सौंपी हुई देवी जानकी जी को ग्रहण कीजिये। (६-९३-२०) वह प्रतिबिम्ब रूपिणी माया सीता, जिस कार्य के लिये रची गयी थी उसे पूरा करके अब अदृश्य हो गयी है"। अग्निदेव के ये वचन सुनकर श्री रामचन्द्रजी ने अति प्रसन्न हो उनका पूजन कर प्रसन्नवदना जानकीजी को ग्रहण किया। (६-९३-२२)

प्रोवाच साक्षी जगतां रघूत्तमं
प्रपन्नसर्वार्तिहरं हुताशनः।
गृहाण देवीं रघुनाथ जानकीं
पुरा त्वया मय्यवरोपितां वने॥(२०)
तिरोहिता सा प्रतिबिम्बरूपिणी
कृता यदर्थं कृतकृत्यतां गता।
ततोऽतिहृष्टो परिगृह्य जानकीं
रामः प्रहृष्टः प्रतिपूज्य पावकम्(२२)

(1695)

उपदेश

सर्वसाक्षी अग्निदेव स्पष्ट करें कि
तपोवन में जिस सीता को आपने मेरे
पास रखा था उसे आप ग्रहण करें एवं
प्रतिबिम्ब माया-सीता को अपना कार्य
कर तिरोहित हो चुकी इस विषय में
बहुत ही निर्णयात्मक और महत्वपूर्ण है।

आपकी असली चित्-शक्ति
नर-तन में रघुकुल की बधु और
अयोध्या की रानी स्वरूपी सीता
जी को रावण द्वारा हरे जाने से अलग
रखे जनकर रघुकुल की मर्यादा
बचाये रखना, किन्तु साथ ही साथ
रावण को भ्रम में ही रखे रखना कि
वह असली सीता को ही हर ले
जा रहा है। (इसका प्रमाण है कि हरने
के पूर्व वह सीताजी को मानसिक
प्रणाम करता है) सम्भवतः ये भी
कारण हो सकते हैं रघुवंश
सरकार श्री रामचन्द्रजी के

सीता को पंचवटी में एकान्त में ही
गुप्त रूप से अग्नि में रख छोड़ने
का।

श्री रामजी एक पत्निव्रत हैं, अतः
वनवास की अवधि पूरी होते ही
अयोध्या लौट कर अवध के
राज्य सिंहासन पर असली सीताजी के
साथ बैठ कर राज्य तिलक कराना
है जिस सीता का पाणिग्रहण
उन्होंने मिथिला में किया था, एवं
अपने प्रिय जनों परिजनों और
पुरजनों वही सीता लौटानी है जिसे
साथ लेकर वन को चले थे। माया
रूप सीता के प्रतिबिम्ब को तिरोहित
कर देना तथा रावण की दुर्व्यवस्था
में सीता को निष्कलंक प्रमाणित
करते हुए अपनी चित्-शक्ति सीता
को अग्नि से लौटा लेने के उद्देश्य
से ही सम्भवतः प्रभु ने यह

1696

सीता जी की अग्नि-परीक्षा का नाटक क्या है।

ये तो प्रत्यक्ष बाजीगरी मात्र ही है। उस लीलामय सर्वज्ञ प्रभु की हर लीला को अपनी गूढ़ रहस्यमें प्रभु श्री रामचन्द्र भगवान स्वयं ही जानें, हम क्षुद्र संसारी जीव उस अगम्य की लीला को क्या समझ सकेंगे।

श्री सीताराम सीताराम सीताराम जय सीताराम —

श्री राम जय राम जय जय राम

(1697)

(385)

15/5/83

सुत लै नभव सहज उदास।
विलख रहा यह दास निहार॥

अभ्यूस दीन अनाथ लख द्वार।
बनके सनाथ तेरे द्वार॥

विचारत कभि सुप्रेम नाम निहार।
किया न कभी सुमिरन निहार॥

अकारन कृपाल स्वभाव निहार।
सुन अप्राप्या निखारि द्वार निहार॥

रखो विरद, अपना जन निहार।
रख, जनम जनम दास निहार॥

(1698)

पूर दो यह अभिलाष हमारा।
सतत समर्पित चित, चरन तिहारा।

डालो इक करुना दृष्टि निहारा।
अपना लो, कह 'सँकर' तिहारा॥

सॅल नं 63 (1699)

5/6/83 म्हारा बाई को खीचड़ो

थाली भर कर ल्याई खीचड़ो
ऊपर घी की बाटकी।
जीमो म्हारा स्याम धणी
जिमावें बेटी जाट की॥ टेर

बाबो म्हारो गाँव गयो है
ना जाणे कद आवैलो
ऊँका भरोसे बैठ्यो रह्यो तो
भूखो ही रह जावैलो।
आज जिमाऊँ थानें खीचड़ो
काल राबड़ी छाछ की।
जीमो म्हारा स्याम धणी
जिमावें बेटी जाट की॥ १

(1700)

बार बार मन्दिर न जड़ती
बार बार मैं खोलती ।
कइयाँ कोनी जीमे है सांवरा
करड़ो करड़ो बोलती ।
थूँ जीमै तो जद मैं जीमूं
मानूं ना कोई लाट की
जीमो म्हारा स्याम धणी
जिमावे बेटी जाट की ॥२

पड़दो भूल गई सांवरिया
पड़दो फेर लगायो जी
धावलिये की ओट बैठकर
स्याम खीचड़ो खुवायो जी ।
भोला ढोला मनुवाँ कै
सांवरियाँ कइयाँ जजाट की
जीमो म्हारा स्याम धणी
जिमावे बेटी जाट की ॥३

भक्ति होतो करमां जैसी
सांवरिये घर आवे लो
सोहन को आकार प्रभु का
हर्ष हर्ष गुन गावे लो ।
सांचो प्रेम प्रभु में हो तो
मुक्ति ओले कोठ की
भीलो सा ध्यान धापी
जिमावे बेरी आर की ।। ८

17.0२

386

८|८|83

मेरे प्यारे श्याम धनी।
बिसारें न विरद अपनी॥

हेरो न प्रभु मम करनी।
दिखा दो सूरत सलोनी॥

बिखेर दो मुस्कान अपनी।
सुना दो पायलन धुनी॥

डालो कृपा दृष्टि अपनी।
परसन दो पद नरम मनी॥

बैठा लो गोद अपनी।
ले लो 'शंकर' सर्न अपनी॥

(1703)

(३४१)

२५/६/८३

ठुकरा अनाज लाज ला मौलाबी

राघव बड़ो भरोसो तेरो।
प्रभु बड़ो ही भरोसो तेरो ।। २

धर्म रक्षन जुग जुग अवतार लियौ
परजन लगि छिन छिन प्रगट भयौ

जन रक्षन सदा अद्भुत कर्म कियो।
जन दुख हर जन रक्षन कहायो ।।

कच्छ मच्छ सूकर माहि गिरि उठायो
अनल विष पियो कमि जुद्ध मनायो

खम्भ फाड़ पहलाद रक्षा कियो
बड़ बल हरनाकुस हर बलि पहरि कियो

1705

मधु मार माधव नाम पायो।
खर मुर मार खरारि मुरारि भयो

देवन को प्रभु तुम अमृत प्यायो।
असुरन को छल मार भगायो।।

बलि छल्यो बार बाली छल्यो।
वृन्दा सी पतिव्रता नार छल्यो।

भीसम जयद्रथ विप्र द्रोन छल्यो
भक्तन हेत छलिया कहलायो।।

कंस भय से नींद नहीं पायो।
सिसुपाल सभा मार सुनायो।।

सिय-चोर निसचर सकुल नायौं
ऐसो महा कृपाल प्रभु तुम हो।।

~~खकर मारयौ~~

खकर मार सुआयौं कुल परिवार।
अब देर से बैरि छन मैं पार५

पुसला माही कालिय लावयो।
अघासुर पेट मैं जाग फुल्यौ॥

सोंच सोंच सकटासुर पुवायो।
तृणावरत को मूसल बनायो॥

मिलनि बैर करमा खिचड़ी आयो
अहिरिन घर माखन चुरा खायो

घधियू भइ धोधे पर नाचे रिझायो
धोधे लोग कुरन गोबर टिप लगायो

(1706)

चिकड़े बच्छे चुड़ै छिन चबायो।
मुहि खवा असमें तब्रह्मंड दिखायो

विदरानी घर छिलके खायो।
टेर सुन धा डुबत गज उबार्यो।।

उखल बँधे बिटप गिरायो
बिस ग्रुप्नी बनवा मिरा बचायो।।

इन्दर जब कोप कियो ब्रज ऊपर
गिरधर कहायो धर गिर नख पर

ब्रज में जुठन खा गुल्लि डंडा खेल्यो
हारे गोपे सखन पिठ चढ़ायो।

ब्रह्मा बालक बछड़े चुरायो।
एक बर्ष तिनको रूप धार रह्यो है।